श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः

गोस्वामीश्रीहरिकृष्णशास्त्रिविरचित

श्रीआचार्यविजय

हिन्दी अनुवाद
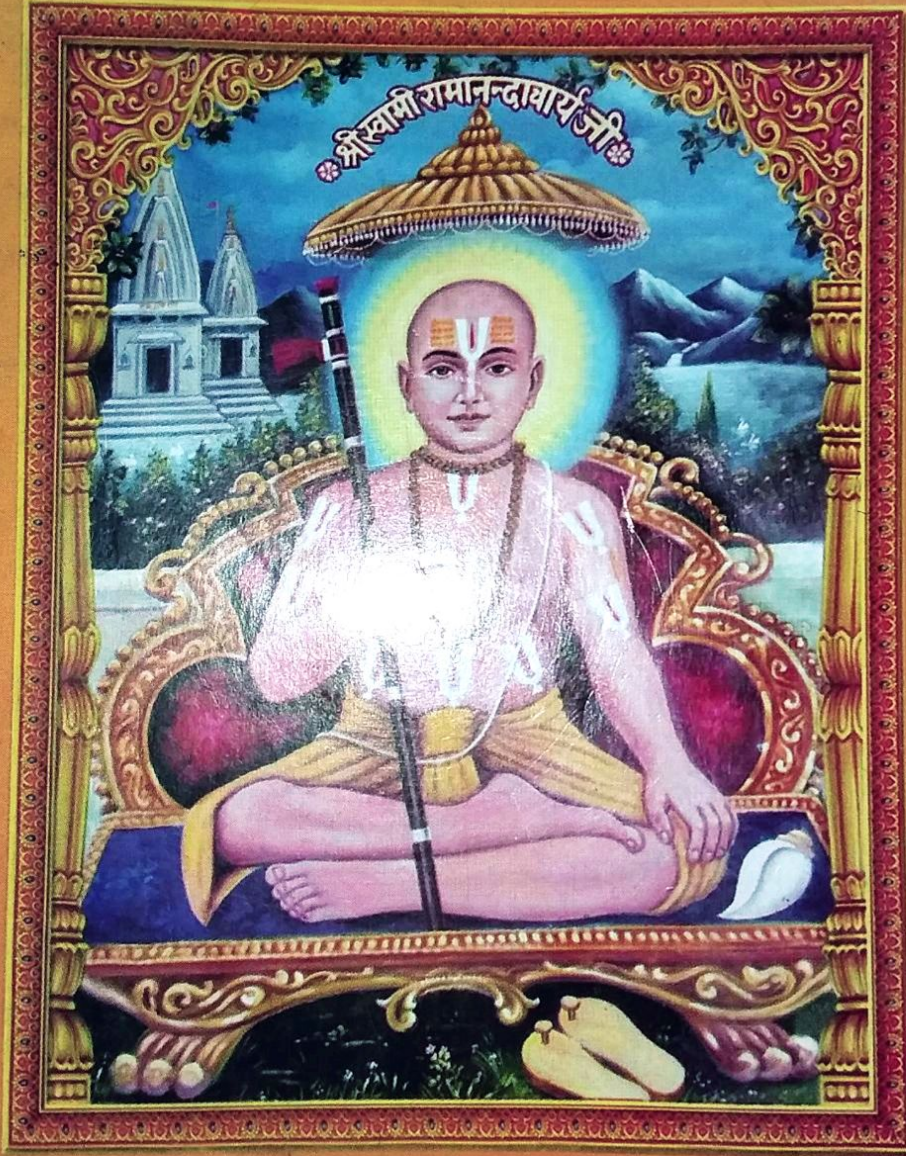
आविर्भूतो महायोगी द्वितीय इव भास्करः।
रामानन्द इति ख्यातो लोकोद्धरणकारणः।।

प्रकाशक

डॉ. स्वामी राघवाचार्य वेदान्ती

जगद्गुरु अग्रदेवाचार्यपीठ श्रीजानकीनाथ बड़ा मन्दिर, रेवासा (सीकर)

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य के समग्र जीवन चरित्र, उनकी विजय–यात्राओं, उनके उपदेशों तथा उनके शिष्य प्रशिष्यों के विवरण सहित उनके सिद्धांतों के विश्लेषण को समाहित करने वाला सर्वोत्कृष्ट संस्कृत गद्यकाव्य।

वैष्णव भक्ति के प्रमुख आचार्यों में मध्यकाल में हुए रामभक्ति के प्रवर्तक तथा ''जात पाँति पूछे नहिं कोई। हरि को भजे सो हरि का होई।'' जैसी घोषणाओं द्वारा भक्ति की भागीरथी को ऊँच–नीच और जात–पाँत के भेदभाव के बिना जन–जन तक पहुँचाने वाले, कबीर, रैदास, धन्ना, सुरसुरि, आदि बारह प्रमुख शिष्यों को रामभक्ति की निर्गुण और सगुण दोनों शाखाओं का नेतृत्व करने के लिए प्रेरित करने वाले जगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्य का नाम भारत के सांस्कृतिक इतिहास में अमर है।

इनके जीवन चरित्र पर कुछ काव्य ''रामानन्ददिग्विजय'' आदि नामों से तथा कुछ जीवन परिचय देने वाले छुट पुट ग्रन्थ अवश्य छपे हैं किन्तु अधिकृत एवं प्रामाणिक रूप से उनके समस्त जीवन चरित्र को उत्कृष्ट संस्कृत गद्य में अभिलिखित करने वाला, साथ ही उनके विशिष्टाद्वैत दर्शन के अंगभूत वेदान्त–सिद्धान्तों, रामभक्तों के लिए उनके द्वारा निर्धारित जीवनचर्या और जीवन दर्शन को समाहित करने वाला ग्रन्थ अब तक नहीं लिखा गया था।

रामानन्दाचार्य के समस्त साहि[illegible] अध्ययन कर बाणभट्ट की कादम्बरी की [illegible] उत्कृष्ट संस्कृत गद्य में रामानन्दाचार्य के [illegible] चरित्र को, उनकी यात्राओं, शास्त्रार्थों, सिद्धान्तों तथा धर्मशास्त्र एवं अन्य प्राचीन शास्त्रों के प्रमाणों सहित इस सम्प्रदाय की परम्पराओं का 59 विशाल परिच्छेदों में वर्णन करने वाला तथा पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध, दो विशाल खंडो में विभाजित अपराकाशी जयपुर के मूर्धन्य विद्वान गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री द्वारा प्रणीत यह अमर ग्रन्थ संस्कृत गद्यकाव्य भी है, चंपू काव्य भी, जीवन चरित्र भी, सिद्धान्त ग्रन्थ भी, संदर्भ ग्रन्थ भी। प्रस्तुत है इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद सहित, लेखक परिचय, कथासार आदि के साथ प्रामाणिक एवं विशिष्ट संस्करण।

30 July 2011 18:36:07

श्रीसीतारामाभ्यान्नमः ।

गोस्वामि श्रीहरिकृष्णशास्त्रिविरचितः

श्रीआचार्यविजय

(जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यस्य चरित्रं सिद्धान्ताश्च)

हिन्दी-अनुवाद

प्रधान सम्पादक

राष्ट्रपति सम्मानित देवर्षि कलानाथ शास्त्री

अनुवादक

डॉ. गयाप्रसादत्रिपाठी

महान्त हरिशंकरदास वेदान्ती

तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य

प्रकाशक

जगद्गुरु अग्रदेवाचार्यपीठ

श्रीजानकीनाथ बड़ा मन्दिर, रेवासा धाम, सीकर

एवं

हंसा प्रकाशन, जयपुर

ISBN : 978-81-88257-96-6

संस्करणम् : प्रथम २०११, ~~१५०० प्रति~~
© : सर्वाधिकार सुरक्षित
मूल्यम् : ११००/- रुपये मात्र

प्रकाशक : **डॉ० स्वामी राघवाचार्य वेदान्ती,**
अग्रपीठाधीश्वर श्रीजानकीनाथ बड़ा मन्दिर,
रेवासाधाम, (सीकर)
एवं
: **हंसा प्रकाशन,**
५७, नाटाणी भवन, मिश्रराजाजी का रास्ता,
चाँदपोल बाजार, जयपुर – ३०२००१

अक्षर विन्यास : लोकमित्र, सूरजपोल बाजार, जयपुर

मुद्रक : टैक्नोक्रेट प्रिन्टर्स, सुदर्शनपुरा ओद्योगिक क्षेत्र, जयपुर

गोस्वामि हरिकृष्णशास्त्रिविरचितः आचार्यविजयः

विषयाऽनुक्रमणिका

'पूर्वार्द्ध'

'उत्तरार्द्ध'

परिशिष्ट

६०२

"श्री सीतारामचन्द्राभ्यां नम:"

मं. नारायणदेवाचार्य, डाकोर धाम (गुजरात)
ब्रह्मपीठाधीश्वर खोजीजी द्वाराचार्य, त्रिवेणी धाम शाहपुरा जयपुर (राज.)
काठियापरिवाराचार्य दिनांक ....

मंगलमय शुभकामनाएँ

यह जानकर अतीव प्रसन्नता हुई कि जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी के जीवन चरित्र पर गोस्वामी श्रीहरिकृष्ण जी शास्त्री द्वारा रचित संस्कृत महाकाव्य "आचार्यविजय" का राष्ट्रभाषा हिन्दी में पण्डित श्रीगयाप्रसादजी, श्रीतुलीसदासजी एवं श्रीहरिशंकरवेदान्ती जी द्वारा अनूदित एवं देवर्षि श्रीकलानाथशास्त्री द्वारा सम्पादित "आचार्यविजय" नामक ग्रन्थ का प्रकाशन श्री अग्रपीठाधीश्वर रेवासा पीठ द्वारा किया जा रहा है । यह हिन्दी भाषा एवं श्री रामानन्द सम्प्रदाय के लिए गौरव की बात है ।

वस्तुत: श्रीरामानन्द: स्वयं राम: प्रादुर्भूतो महीतले" के अनुसार जगद्गुरु जी श्री भगवान् राघवेन्द्र सरकार के साक्षात् अवतार थे, जिनके आदर्श मानकर उनके पद चिन्हों पर चलने से मानव मात्र का कल्याण होना सुनिश्चित है । मातृभाषा में अनूदित इस ग्रन्थ का अध्ययन करने से राष्ट्र एकता के सूत्र में बंध जायेगा, ऊँच-नीच, वर्ग एवं वर्ण विहीन समाज की स्थापना कर सकेंगा ।

मैं इस ग्रन्थ के प्रणयन में सहयोग देने वाले सन्त महानुभावों को साधुवाद देता हुआ "आचार्य विजय" ग्रन्थ की उपयोगिता के लिए अपनी मंगलमय शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ ।

महन्त नारायण देवाचार्य
ब्रह्मपीठाधीश्वर एवं खोजीजीद्वाराचार्य
त्रिवेणी धाम वाया शाहपुरा जयपुर राज.

शुभाकांक्षा

श्रीरामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले ॥
सीतानाथसमारभ्भां रामानन्दार्यमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥

यह समस्त जगत् भगवान् की सृष्टि का एक अङ्ग है । भगवान् श्री राम सर्वत्र सब में रम रहे हैं । "रमन्ते योगिनो" सच्चिदानन्द घन प्रभु श्री राम जगदुत्पत्ति, पालन एवं संहार करने वाले त्रिदेवों के भी कारण हैं । 'शम्भु विरंचि विष्णु भगवाना । उपजहिं जासु अंश ते नाना । श्रीराम ही सर्वावतारी हैं । "**सर्वेषामवताराणामवतारी रघूत्तमः** ॥ समय-समय पर प्रभु श्रीराम धर्म की रक्षा अधर्म का विनाश तथा अपने चरित्र के माध्यम से शिक्षा देने के लिये धराधाम पर अवतीर्ण होते हैं । साथ ही जगत् में दृश्यमान विशिष्ट विभूतियाँ भगवान् के अंश है- "यद् यद् विभूतिमत्.......मम तेजोंश संभवम् । भगवान् के अवतार अधिकांशतः पुण्यभूमि भारत में ही होते हैं विशेषकर उत्तर भारत में तथा आचार्यों के अवतार दक्षिण भारत में । ऐसी मान्यता है ।

भगवान् श्रीरामानन्दाचार्य जी महाराज लोक कल्याण के लिये तीर्थराज प्रयाग में प्रगट हुए । अवतारों के समय जैसे प्रजा पीड़ित होती है देव, साधु-सन्त गो ब्राह्मण सताये जाते हैं तब भगवान् अवतरित होते हैं वैसी ही परिस्थितियाँ भगवान् श्रीरामानन्दाचार्य जी के समय में थीं यवनों के अत्याचारों से सम्पूर्ण प्रजा उत्पीड़ित थी ।

आचार्य श्री ने अपने तपोबल से राक्षसी प्रवृत्ति वालों का विनाश एवं हिन्दू धर्म की रक्षा की । उपासना पद्धतियों में भी बड़े मतभेद थे । निर्गुण-निराकार, सगुण साकार, बौद्ध, जैन, चारुवाक् अद्वैत आदि मत मतान्तर फैले हुए थे आपने प्रकट होकर सभी का समन्वय किया ।

व्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुनबिगत विनोद । सो अज प्रेम भगति वस कौशल्या के गोद ।। यह देन भी आचार्यजी की ही है ।

हिन्दू समाज वर्णाश्रम का विकृत रूप ले रखा था । आप श्री ने "हरि को भजै सो हरि का होई ।। जाति-पांति पूछे नहिं कोई ।। इस महावाक्य के माध्यम से ऊँच-नीच छूआ-छूत की विकराल खाई को पाटने का प्रयास किया । कतिपय सम्प्रदाय एवं पन्थ के लोग अपनी सिद्धाई से लोगों को पीड़ित करते थे । आपने अपनी सिद्धाई से उनका मान-मर्दन किया एवं मुस्लिम अत्याचारियों को भी अपनी सिद्धि से परास्त किया ।

सिद्धि-साधना के साथ आप शब्द एवं परब्रह्म में निष्णात थे । श्रीआनन्द भाष्य के माध्यम से प्रस्थानत्रयी को सुशोभित किया ।

द्वादश महा भागवतों को शिष्य बनाकर सभी दिशाओं में भेजकर भक्ति-प्रपत्ति का अधिकार सभी को प्रदान किया । आप श्री की शाखा प्रशाखायें सम्पूर्ण देश में व्याप्त हैं । "हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता ।" की भांति आप श्री के चरित अपार हैं । सम्प्रदाय एवं अन्य विद्वानों ने महाकाव्य काव्य, नाटक, उपन्यास, टीका-टिप्पणियां आदि लिखकर अपने को धन्य कियाा है । भक्तमाल आदि लोक प्रसिद्ध ग्रन्थ में आप श्री की एवं शिष्य परम्परा की विशद चर्चा है ।

विद्वद्वरेण्य श्रीगोस्वामी श्रीहरिकृष्णशास्त्रीजी ने "श्रीआचार्यविजय" के रूप में गद्य में महाकाव्य लिखा है । श्रीशास्त्री जी ने संस्कृत वाङ्मय में ग्रन्थ लिखकर संस्कृत भाषा एवं आचार्य श्री तथा श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की अवर्णनीय सेवा की है ।

परम सन्त विरक्त शिरोमणि मनीषी नव्यन्यायाचार्य आदि विशिष्ट पदों से समलंकृत श्रीतुलसीदासजी पं. गयाप्रसादशास्त्री एवं म. श्रीहरिशंकरदासजी वेन्दान्तीजी ने तो हिन्दी अनुवाद लिखकर सुरसरि सम सब कर हित सम्पादित किया है ।

अग्रदेवाचार्य पीठाधीश्वर स्वामी श्रीराघवाचार्य वेदान्ती जी ने सानुवाद इस ग्रन्थ का प्रकाशन कराकर सम्प्रदाय का महान् उपकार किया है ।

महन्त नृत्यगोपालदास
श्रीमणिरामदास छावनी सेवाट्रस्ट
श्रीअयोध्याजी, जि. फैजाबाद, उ. प्र.

शुभाशंसा

मङ्गलं भगवान् विष्णुः मङ्गलं गरुडध्वजः ।
मङ्गलं पुण्डरीकाक्षः मङ्गलायतनो हरिः ॥

गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री जी द्वारा उल्लिखित श्री आचार्य विजय नामक यह पुस्तक अत्यन्त प्रमाणित एवं संस्कृत साहित्य का अनुपम गद्य काव्य है । जिसमें भारत वर्ष के एक महान् विभूति सन्त की पावन गाथा अंकित है । जिनके त्याग, तपस्या, ज्ञान, विज्ञान, ओज-तेज व सज्जनता सरलता से १३-१४वीं सदी के सम्पूर्ण मानव समाज आलोकित एवं प्रकाशित था । बचपन में इनका नाम ''ब्रह्मचारी रामानन्दजी'' था । आगे चलकर इन्हीं का नाम आद्य जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी महाराज पड़ा । इन्होंने ही ''यवनों के काल का अतिक्रमण करके इस जगत में सनातन हिन्दू धर्म का प्रचार प्रसार अपने द्वादश शिष्य के साथ रहकर उस काल में किया था । लेखक श्री गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री ने इनकी जीवन गाथा को अत्यन्त गम्भीर संस्कृत भाषा में आबद्ध किया है जो कि सर्वजन ग्राह्य वर्तमान समय में नहीं हो सकता है ।

अतः इस ग्रन्थ को सर्वजनहिताय बनाने के लिये आचार्य श्री तुलसीदास जी खाक चौक अयोध्या पं. गया प्रसाद जी एवं महन्त हरिशंकर दास जी वेदान्ती जी जयपुर निवासी ने भूरि परिश्रम करके हिन्दी भाषा में अनुवाद किया है । इसलिए ये सभी सुधी पुरुष साधुवाद के योग्य हैं । हमने भी कुछ प्रकरणों में अशुद्ध शब्दों को शुद्ध करने का प्रयास किया है ।

इस ग्रन्थ के सम्पादन में से अधिक महत्व पुस्तक के प्रकाशन कराने वालों का होता है । ऐसे महनीय प्रशंसनीय कार्य का श्रेय अग्रपीठाधीश्वर स्वामी श्रीराघवाचार्य वेदान्ती जी महाराज, रैवासाधाम राजस्थान को जाता है । हम सभी सन्त समाज भगवान् विश्वनाथजी से प्रार्थना करते हैं कि पूज्य स्वामी जी दीर्घजीवी बने रहे, एवं सम्प्रदाय का कार्य इसी प्रकार सम्पादन होता रहे ।

भावत्कः शुभाकांक्षी

महन्त डॉ. श्रवणदासजी

श्री हनुमान मन्दिर, भदैनी, वाराणसी ।

अभिमत

॥ श्री रामः शरणं मम ॥

''रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले ॥''

भगवत्पाद् जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी महाराज सर्वेश्वर प्रभु श्री राघव के ही आचार्यावतार हैं । यथा परमप्रभु श्रीराम ने लोक में आकर लौकिक-वैदिक समग्र-मर्यादाओं की प्रतिष्ठापना का स्वरूप प्रस्तुत किया, वैसे ही तत्कल्प आचार्यश्री ने भक्ति की महामर्यादा व महामहिमा की पूर्ण-प्रतिष्ठापना का उद्देश्यपूर्ण किया । जाति-वर्ण-धर्म सम्प्रदाय की संकुचित मान्यताओं के मध्य, भक्ति रूपी महासेतु का निर्माण कर लौकिक पारमार्थिक व सामाजिक हितों का समुन्नयन किया । "सर्वे प्रपत्तेरधिकारिण:'' का व्यापक-सिद्धान्त, लोक में प्रयोगभूत हुआ ।

आचार्यश्री चरणों ने लोक शिक्षा के लिए भक्तिमय वेदान्तमय व योगमय साधनें का स्वयं अनुपालन कर लोक में सम्यक् प्रचार भी किया । समय-समय पर नाना पन्थपन्थाईयों के लोक विरोधी व्यवधान भी आये किन्तु आचार्य चरणों ने अपनी साधना-सिद्धि के बल पर सभी को पराभूत कर श्रीवैष्णव सिद्धान्तों का पुनर्स्थापन कर विधर्मियों को झुकने को बाध्य कर दिया । जहाँ भक्ति की प्रधानता से समतामूलक समाज का पुनर्गठन किया वहाँ आत्मकल्याण के क्षेत्र में अन्य पूर्वाचार्यों से विलक्षण समतामूलक सार्वभौम विशिष्टाद्वैत-दर्शन का प्राकट्य किया ।

''जाति पाँति पूछे न कोई ।
हरि को भजै सो हरि को होई ॥''

ऐसे परमाचार्यों की पावन दिग्विजय को व्यक्त करने वाला ग्रन्थ "आचार्य विजय" के नाम से प्रख्यात हैं, जिसमें साधना के सुन्दर-प्रयोग, सिद्धियों के चमत्कार, तर्कबहुल-विधर्मियों की पराजय, एवम् प्राणिमात्र को अपनाने का परमोदार-प्रयोग प्रस्तुत किया गया है । जो आचार्याभिमान सम्वर्द्धक, श्री वैष्णव-निष्ठा समुन्नायक, प्रभु श्रीराम की पराशक्ति का प्रदर्शक, परमपावन सद्ग्रन्थ है । ऐसे ग्रन्थ के लोक प्रचार के लिए सतत् कटिबद्ध-वैष्णव-समाज के गौरवभूत परम शास्त्रज्ञ विद्वान् श्रीमद्ग्रवंशावतंस तत्पीठाचार्य श्रीमद्राघवाचार्य जी महाराज के निष्ठा-प्रयत्न को प्रणाम करता हूँ और ऐसे पवित्र ग्रन्थ का राष्ट्रभाषा में अनुवाद करने के लिये विनम्र विद्वान् श्रीतुलसीदासजी न्यायाचार्य पं. गयाप्रसाद त्रिपाठी एवं मं. श्रीहरिशंकरदासवेदान्ती को अपनी शुभकामनाओं के साथ इसके प्रकाशन के लिये पूज्य महाराज श्रीराघवाचार्य के प्रति कृतज्ञताज्ञापन करता हूँ । क्योंकि मेरी दृष्टि में निश्चित इससे सम्प्रदानिष्ठ लोगों को अपने सिद्धान्तों व श्रीआचार्य जी के चरित्र की आवश्यक जानकारी मिलेगी ।

स्वामी श्रीभगवत स्वरूपाचार्य जी महाराज (भास्कर स्वामी)

साकेत धाम, शुकतीर्थ, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

श्री हनुमते नमः ॥ श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः ॥

शुभ सम्मति

॥ श्रीरामः शरणं ॥

हिन्दूधर्मोद्धारक, कलिपानावतार, भगवान् श्रीमद् रामानन्दाचार्यजी का परमपावन चरित्र लोकविश्रुत है । अनेक मनीषियों ने मम अपनी गद्यपद्यात्मकशैली में पूज्य आचार्य श्री का उदात्त चरित्र उपनिबद्ध किया है । इनमें परम विद्वान् पं. श्रीहरिकृष्ण जी गोस्वामी द्वारा विरचित "आचार्यविजय" नामक ग्रन्थ रत्न अत्यन्त उपादेय है । इसमें आनन्दा भाष्यकार "जगद्गुरु स्वामी जी का जीवनचरित साङ्गोपाङ्ग प्रतिपादित हैं । यह हमारी प्रसन्नता का विषय है कि श्रीवैष्णव सम्प्रदाचार्य, रैवासा धाम में स्थित श्रीमद्अग्रदेव पीठाधिवति, परम पूज्य श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ वेदान्ताचार्य डॉ. स्वामी श्रीराघवाचार्यजी महाराज द्वारा निर्देशित एवं परमादरणीय श्रीमद् स्वामी श्रीहरिशंकरदास वेदान्ती महाराज द्वारा प्रेरित अनन्त श्रीविभूषित परम श्रीवैष्णव विद्वान् न्यायाचार्य श्रीतुलसीदासजी महाराज पं. श्रीगयाप्रसादत्रिपाठी एवं म. श्रीहरिशंकरदास वेदान्ती द्वारा अनूदित होकर प्रकाशित हो रहा है । आशा है कि यह नवोदित ग्रन्थ "आचार्यविजय" श्रद्धेय आचार्य के चरितामृत के पिपासु पाठकों का परमपाथेय होगा ।

स्वामी त्रिभुवनदास

२०६७, मंगलम कुटीयम्
गंगालाइन स्वर्ग आश्रम उत्तराखण्ड

आमोदवार्ता

श्री रामानन्द रघुनाथ ज्यौं द्वितीय सेतु जगतरण कियौ

असंख्येय कल्याण गुणगण निलय, अखिल हेय प्रत्यनीक, सच्चदानन्द घन, शरणागत वत्सल, भक्तवत्सल, सर्वेश्वर, परात्पर परब्रह्म श्रीरघुनाथजी के ज्ञानादि गुण, उनका मंगलभवन अमंगलहारी श्रीविग्रह, उनका दिव्य अप्राकृत धाम उनकी लीलाएँ, उनके आश्रित रहने वाले जीव, प्रकृति और काल ये सभी पारमार्थिक सत्य ही हैं । अर्थात् ये औपाधिक या कल्पित नहीं है । सृष्ट्यादि में अभिव्यक्त नाम रूप वाले प्रकृति पुरुष शरीरक सूक्ष्म चिदचिद्विशिष्ट श्रीरामजी विराजमान रहते हैं । सृष्टिकाल में स्थूल चिदचिद्विशिष्ट विभक्त नाम रूप वाले प्रकृति पुरुष शरीरक श्रीरामजी रहते हैं । संहार काल में भी संहारावस्था को प्राप्त जगत् शरीरक श्रीरामजी की सत्ता विद्यमान रहती है । संहार के पश्चात् प्रलयकाल में भी पुनः सूक्ष्मचिदचिद् विशिष्ट श्रीरघुनाथजी विद्यमान रहते हैं । जैसे शरीरगत दोष आत्मा में व्याप्त नहीं होते उसी प्रकार चेतनाऽचेतनशरीरक श्रीरामजी में जीवगत प्रकृतिगत दोष व्याप्त नहीं होते हैं । यही विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त है । यह पूर्ण अनुभव सिद्ध पूर्ण व्यावहारिक पूर्ण पारमार्थिक सहृदय सुधीजनों को ग्राह्य सिद्धान्त है । श्रीशांकरमतानुसार ज्ञान से जीव ईश्वर सहित सम्पूर्ण प्रपञ्च का ध्वंस होने से भक्ति सम्भव नहीं है । भक्ति में उपास्य उपासक उपासना सामग्री तीनों की अनिवार्यता है । भक्ति पथ का आश्रय लिये बिना जीवों का कल्याण कथमपि सम्भव नहीं है ।

श्रेयः स्रुतिं भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये ।
तेषामसौ क्लेशल एव शिष्यते नान्यद् यथा स्थूलतुषावघातिनाम् ॥

-(१०-१४-४)

भक्ति भागवत धर्म के पोषक सिद्धान्त वचन श्रुति स्मृति पुराण इतिहास आगम प्रसिद्ध हैं । जीवों के लिए एकमात्र कल्याणकारी मार्ग भक्ति ही है । इसी की पूर्ण प्रतिष्ठा के लिए करुणावरुणालय श्रीरामजी ही यतीन्द्रकुलचक्रचूडामणि हिन्दू धर्मोद्धारक कलिपावनावतार आचार्य सम्राट् श्री मदाद्य जगद्गुरु भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी के रूप में धराधाम पर अवतरित हुए । भागवत धर्म के द्वादश आचार्य श्रीस्वामीजी के प्रधान द्वादश शिष्य हुए । ऐसा प्रतीत होता है कि भक्ति भागवत धर्म विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त के द्वादशादित्य एक साथ नभमण्डल को आलोकित सुशोभित कर रहे हैं । श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की अविच्छिन्न सिद्ध परम्परा का उल्लेख श्रीनाभा गोस्वामी जी ने श्रीभक्तमाल ग्रन्थ में- "औरऊ शिष्य प्रशिष्य एक ते एक उजागर । जग मंगल आधार भक्ति दसधा के आगर ।।" का उद्घोष किया है ।

भक्ति भूमि को सिंचित पल्लवित पुष्पित फलित एवं प्रसारित करने के लिए ही यतीन्द्रकुल कमल भास्कर सनातन वैदिक वैष्णव धर्म प्रतिष्ठापन हेतु **श्री रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले** । सभी वर्ण सभी आश्रमों में भेद रहित होकर अति उदारतापूर्वक आचार्य चरण ने भक्तिस्थापना का महनीय कार्य किया । नास्तिक मतदलन पूर्वक अन्धविश्वास पाखण्ड दम्भ आदि को नष्ट कर श्रीराम प्रेम के द्वारा समग्र मानव जाति को एकता के प्रेम सूत्र में बांधा ।

विद्वद्वरेण्य पदवाक्यप्रमाणपारावारीण आचार्यनिष्ठ पूज्य श्री हरिकृष्ण गोस्वामीजी महाराज ने रस छन्द, अलंकार से मण्डित गद्यात्मक आचार्य विजय नामक ग्रन्थ रत्न समाज को प्रदान कर वैष्णव जगत् का महान् उपकार किया है । भारतीय संस्कृति के प्राणभूत आदर्श बिन्दुओं का बड़ा ही सुन्दर चित्रण इस ग्रन्थ में किया गया है । बड़ी प्रसन्नता की बात है कि बहुजनहिताय बहुजनसुखाय यह ग्रन्थ सर्वसुलभ एवं सरल बनाने के लिए पं. गयाप्रसादशास्त्री महान्त श्रीहरिशंकरदासजी वेदान्ती एवं तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य के द्वारा विरचित हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित हो रहा है ।

वैष्णव जगत की शोभा सरलता विनम्रता आदि की प्रतिमूर्ति जगद्गुरुद्वाराचार्य श्रीअग्रदेवाचार्य रेवासा पीठाधीश्वर पूज्य स्वामी श्रीराघवाचार्य जी महाराज के निर्देशन में यह पुनीत कार्य सम्पादित हो रहा है । इसके लिए यह दास आचार्य चरणों में प्रणत है ।

विद्वद्वरेण्य न्यायाचार्य हमारे परम सुहृद श्रद्धेय पूज्य श्री तुलसीदासजी महाराज की आदर्श आचार्य निष्ठा एवं समर्पित श्रम को मैं प्रणाम करता हूँ । आपकी ऐसी ही कृपा बनी रहे । श्रीसीतारामजी से प्रार्थना है श्रीतुलसीदास जी महाराज के द्वारा इसी प्रकार के पवित्र कार्य सम्पादित कराते रहें ।

भवदीय दासानुदास

-जगद्गुरुद्वाराचार्य श्रीराजेन्द्राचार्यजी, मलूकपीठ

श्रीमलूक पीठ श्रीधाम वृन्दावन आश्विन शुक्ल नवमी शनिवार

स्वात्मनिवेदनम्

भारत की पुण्य भूमि, जहाँ प्रत्येक युग में अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक अलग-अलग नाम रूपों में स्वयं अवतीर्ण होकर अपने दिव्य ज्ञानालोक से सम्पूर्ण भूमण्डल को आलोकित करते रहते हैं । और साथ ही अपनी दिव्य विभूतियों को धराधाम में प्रेषित कर उनके द्वारा विरचित धर्मग्रन्थों एवं सदुपदेशों के माध्यम से भवसागर सन्तरण, धर्म एवं विश्वशान्ति संस्थापन हेतु मार्गों को प्रशस्त करते रहते हैं ।

सृष्टि के प्रवाह में यहाँ अनेकानेक युग प्रवर्तक आचार्य, सन्त, विद्वान एवं मनीषियों ने अवतरित होकर विभिन्न मार्गों द्वारा एक ही अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति की ओर संकेत किया है । सन्त सम्प्रदायों की लम्बी परम्परा में वैष्णव सम्प्रदाय ने अपनी सनातनधर्मिता, सहजता, शुचिता, भावप्रधानता, आडम्बरहीनता तथा भक्ति मार्ग की सर्वसुलभता के कारण जो प्रसिद्धि एवं लोकप्रियता अर्जित की है, वह संभवतः अन्य सम्प्रदायों ने नहीं प्राप्त कर पाई ।

साक्षात् मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी ने स्वयं वैष्णवाम्बुज भास्कर श्रीरामानन्दाचार्य के रूप में अवतरित होकर भक्तिमार्ग का प्रवर्तन किया । आपकी अमल धवल यशोगाथा को गोस्वामी श्रीहरिकृष्णशास्त्री ने अपने संस्कृत ग्रन्थ 'आचार्यविजय' में अतीव प्रभावशाली रूप में चित्रित किया है । यह दिव्य ग्रन्थ मुझे मेरे गुरु आश्रम श्रीअयोध्या धाम से भाषानुवाद हेतु प्राप्त हुआ था । मेरे लिये यह परम सौभाग्य का विषय है ।

अनन्त श्री विभूषित, अयोध्या के वशिष्ठ, परम विद्वान् आचार्य सन्त पं. अखिलेश्वरदास श्री महाराज, श्रीरामकुञ्ज श्रीरामघाट श्रीअयोध्याजी जो अब साकेतवासी हो चुके हैं उनसे मैंने तथा यहाँ के राजाभैया त्रिपाठी सुयोग्य चिकित्सक एवं धर्मप्राण विद्वान महोवा ने एक साथ गुरु दीक्षा ग्रहण की थी । सम्प्रति उस आश्रम के परमाधिकारी गुरु जी के सुयोग्य उत्तराधिकारी परम

श्रद्धेय अनन्तश्रीविभूषित, न्याय दर्शन एवं साहित्य के श्रेष्ठ विद्वान् एवं परम नि:स्पृह व्यक्तित्व श्रीरामानन्ददासजी महाराज हैं । हम दोनों गुरु भाईयों के प्रति उनकी विशिष्ट अनुकम्पा एवं स्नेह वस्तुत: वर्णनातीत है । यही हमारी परमोपलब्धि है । हम दोनों के लिये वे साक्षात् गुरु सदृश ही प्रणम्य हैं वन्दनीय एवं अभिनन्दनीय हैं । महाराज श्रीरामानन्ददासजी ने यह ग्रन्थ आदरणीय डॉ. साहब के ही माध्यम से मेरे पास संप्रेषित कर मुझे इसके भाषानुवाद हेतु आदेशित किया था । उनकी कृपा, प्रेरणा एवं शुभाशीष से ग्रन्थ के प्रथम खण्ड का भाषानुवाद सम्भव हो सका है ।

यद्यपि मैं अपनी अल्पज्ञता अथवा अज्ञता के कारण इस महान् ग्रन्थ के भाषानुवाद के साथ न्याय नहीं कर पाया हूँ । तथापि अपने को धन्य एवं पवित्र बनाने के लिये तथा सन्त चरणों का शुभाशीष प्राप्त करने के लिये उस कार्य में संलग्न हो गया हूँ । कहाँ भाव भाषा एवं अलंकार की उत्कृष्टता की पराकाष्ठा से युक्त यह दिव्य ग्रन्थ और कहाँ अति सामान्य शब्दार्थों के माध्यम से किया गया यह भाषानुवाद । अत: मेरे इस बाल प्रयास को विद्वज्जन एवं सन्तजन एक अबोध की शिशुक्रीड़ा समझकर अपना शुभाशीष प्रदान करते हुये क्षमा करेंगे ।

परमश्रद्धेय विद्वद्वरेण्य सन्त श्री तुलसीदास जी महाराज (वृन्दावन) जिन्होंने प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड का उत्तम भाषानुवाद किया है और जिनका सम्बल एवं दिशा निर्देशन प्राप्त कर मैं इस कार्य में सफल हुआ हूँ उनका मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, और शुभाशीष चाहता हूँ ।

अन्त में श्री सन्त चरणों में अपनी साष्टाङ्ग प्रणति निवेदन करते हुये दो श्लोकों के माध्यम से क्षमा याचना-

मन्दाऽतिमन्देन मया कृतेन, भाष्येन किं तुष्यति धीमतां धी: ।
न तोषमायाति सहस्त्ररश्मि: अभ्यर्चितोऽसौ लघुदीपकेन ।
तथापि मार्ष्टुं तत् कश्मलं धिय: दोषं च वाण्या अपनोदनाय ।
आचार्य ग्रन्थस्य कृतं हि भाष्यम्, न योग्यतायाश्च प्रदर्शनाय ।।

सन्तपादाब्जचञ्चरीक:

डॉ. गयाप्रसाद त्रिपाठी, पूर्व प्राचार्य
कालूकुआँ, भगत होटल के पीछे, बाँदा (उ.प्र.)
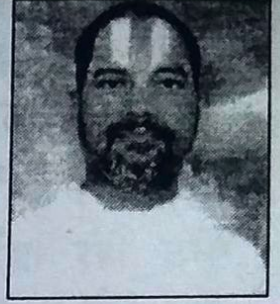
उपोद्घात

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताघ्नता जानता सङ्गमेमहि ॥ -ऋग्वेद

हम कल्याणकारी मार्ग पर चलें स्वस्ति यथा स्यात् तथा चरेम ।

अर्थात् हम कल्याकारी मार्ग पर कुशलमङ्गल के साथ-साथ चलें जैसे सूर्य ताप और प्रकाश तथा चन्द्रमा आह्लाद और प्रकाश देते हुए निरन्तर आकाश मार्ग में विचरण करते हैं यात्रा करते रहते हैं वैसे ही हम लोगों को भी जानते हुए, कुछ न कुछ देते हुए चलना चाहिए । किसी को हानि न पहुँचाते हुए और सबसे मिलते हुए चलना चाहिए ।

''देवमिव आचार्यमुपासीत'' ''गुरुं प्रकाशयेद् धीमान् मन्त्रं यत्नेन गोपयेत्''

इन सूक्तियों का तात्पर्य यही है कि जहाँ तक हो सके येन केनापि प्रकारेण अपनी आचार्य परम्परा का प्रचार-प्रसार करते हुए रहना चाहिए इसलिए किसी हिन्दी कवि ने कहा है-

''निज पूर्व गौरव दीप को बुझने न देना चाहिए''

वैसे भी वास्तव में श्रोतव्य वक्तव्य एवं मन्तव्य दो ही हैं एक तो श्रीहरि, जैसा कि भागवतकार ने लिखा है-

यस्तूत्तमश्लोकगुणानुवादः सङ्गीयतेऽभीक्ष्णममङ्गलघ्नः ।
तमेव नित्यं शृणुयादभीक्ष्णं कृष्णेऽमलां भक्तिमभीप्समानः ॥

-भा.१३, ३, १३

दूसरे श्रीहरि के भक्त । इसीलिए भागवत के प्रथम स्कन्ध में श्री शौनक जी परमभागवत श्रीपरीक्षितजी के विषय में प्रश्न करते हुए कहते हैं-

तत्कथ्यतां महाभाग यदि कृष्णकथाश्रयम् ।
अथवास्य पदाम्भोज मकरन्दलिहां सताम् ॥

किमन्यैरसदालापैरायुषो यदसद् व्ययः ॥

(भागवत १.१६-५)

इसी प्रकार श्रीविदुरजी ने महर्षि मैत्रेय जी से कहा है-

चरितं तस्य राजर्षेरादिराजस्य सत्तम ।

ब्रूहि मे श्रद्दधानस्य विष्वक्सेनकथाश्रयः ॥

-भागवत ३.१३-३

अर्थात् हे साधु शिरोमणे ! आप मुझे आदिराज राजर्षि स्वयम्भुव मनु का पवित्र चरित्र सुनाइए वे श्रीविष्णु भगवान् के शरणापन्न थे इसलिए उनका चरित्र सुनने में मेरी बहुत श्रद्धा है । समस्त श्रुति पुराण एवं इतिहास का भी यही निर्णय है कि भजनीय या तो भगवान् हैं या उनके भक्त । गोस्वामी श्रीनारायणदासजी "नाभाजी" ने भक्तमाल में लिखा है-

सन्तन निर्णय कियौ मथि श्रुति पुराण इतिहास । भजिबे को दोई सुघर कै हरि कै हरि दास ॥

एतावता यह निश्चित होता है कि भगवान् और उनके पावन भक्तों की पावन गाथा ही कहनी एवं सुननी चाहिए श्रीनारदजी, श्रीकपिलजी एवं श्रीसनकादि महर्षियों की तरह जगद्गुरु भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी भगवान् के अवतार होते हुए भी भागवत धर्म के मूर्तिमान् विग्रह सनातन धर्म के चलते फिरते स्वरूप अकारण कारुणिक एवं परम भागवत थे "**रामो विग्रहवान् धर्मः**" यह उक्ति स्वामीजी में पूर्णतया चरितार्थ थी ।[1] जब तक धरती पर सूर्य चन्द्र रहेंगे तब तक स्वामीजी की पावन गाथा गायी जायेगी । स्वामीजी के पावन चरित्र के विषय में अनेक महापुरुषों ने हिन्दी और संस्कृत में काव्य ग्रन्थ, उपन्यास, नाटक एवं चम्पू ग्रन्थ लिखे हैं हिन्दी में सिद्धकवि स्वामी जयरामदेवजी महाराज द्वारा विरचित "श्रीरामानन्दाचार्यचरितामृत" एक दिव्य और अलौकिक ग्रन्थ है दोहा चौपाई में प्रासादिक ग्रन्थ है । इसी प्रकार पूज्यचरण श्रीनारायणदासजी

---

[1] **यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले । रामानन्दकथा तावल्लोकेषु प्रचरिष्यति ।।**

14

भक्तमाली श्रीमामाजी द्वारा रचित अनेक पद्य अत्यन्त रमणीय एवं गेय हैं। संस्कृत में जगद्गुरु स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी द्वारा विरचित "श्रीरामानन्ददिग्विजय" भी सुन्दर एवं सरस महाकाव्य है। परन्तु स्वामीजी के पावन चरित्र के साथ-साथ श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के समस्त सिद्धान्तों का साङ्गोपाङ्ग प्रतिपादक ग्रन्थ की महती अपेक्षा रही उसे विद्वद्वरेण्य श्रीहरिकृष्ण गोस्वामीजी ने पूर्ण किया। संस्कृतजगत् में श्रीशिवराजविजय के बाद सुललित प्रबन्ध के रूप में यदि सम्प्रति कोई ग्रन्थ है तो वह "आचार्य विजय" है। आचार्य विजय ग्रन्थ की शैली बड़ी ही रहस्यमयी है भाषा लच्छेदार एवं प्राञ्जल है।

ग्रन्थ का वैशिष्ट्य तो **विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमम्** के अनुसार परिनिष्ठित व्यक्ति ही समझ सकता है। भाषाकाठिन्य एवं विषयगाम्भीर्य को देखकर श्रीअग्रदेवाचार्य पीठाधीश्वर श्रीस्वामी राघवाचार्यजी के मन में अभिलाषा जगी कि प्रातः स्मरणीय आचार्यचरण का कृतित्व व्यक्तित्व और सिद्धान्त को सर्वसुलभ किया जाय अतः इस दिव्यतम ग्रन्थ का सरल हिन्दी अनुवाद होना चाहिए इसके लिए स्वामी राघवाचार्यजी ने अनेक विद्वानों को कहा कि आप इसका अनुवाद कीजिए अनेक महापुरुषों ने अनुवाद का श्रीगणेश भी किया परन्तु बीच में ही अवरोध आ गया। श्रीमद् गोस्वामी तुलसीदास जयन्ती के पावन अवसर पर श्रीअयोध्याजी में म. श्री हरिशंकरदासजी वेदान्तीजी महाराज ने दास को आज्ञा दी कि आप "**आचार्य विजय**" का अनुवाद कीजिए। श्रीहरिशंकरदास जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के लिए समर्पित है आपकी सम्प्रदाय निष्ठा सर्वथा अलौकिक एवं स्तुल्य है। हमारें राम ने सन् २००७ में पूज्य वेदान्तीजी से कहा कि अयोध्याजी में सन्तों की कृपा से श्रीमद् रामचरितमानस विद्यापीठ की स्थापना हो रही है तो यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और श्रीमद् रामचरितमानस विद्यापीठ के उद्घाटन के पुनीत अवसर पर स्वयं सहयोग किये और अनेक महापुरुषों से करवाया दास क निवेदन करने पर "मानस सिद्धान्त ग्रन्थ का प्रकाशन कराकर निःशुल्क वितरण करवाया। नियम से प्रतिवर्ष गो. तुलसीदास डॉ.

श्रीरामबहादुरदासजी (दिल्ली) के सहयोग से जयन्ती पर अयोध्या आते हैं और कुछ न कुछ सहयोग अवश्य करते हैं । वेदान्तीजी ने घोषणा की है कि चैत्रमास में श्रीमद्रामचरितमानस विद्यापीठ में विद्यार्थियों के लिए छात्रावास का निर्माण कार्य भी शुरू हो जायेगा आप एक आचार्यनिष्ठ एवं सम्प्रदाय के लिए समर्पित करते हैं आपकी दास के ऊपर बड़ी कृपा है अत: "आज्ञा गुरूणामविचारणीया" को ध्यान में रखकर दास ने स्वीकार कर लिया । दास तो नव्यन्याय का विद्यार्थी रहा है साहित्य एवं व्याकरण का सम्यक् बोध नहीं है फिर भी प्रात: स्मरणीय आचार्यचरण की कृपा के बल पर "**तस्य किं नाम काठिन्यं गुरुणा योऽनुकम्पित:**" इस सूक्ति को ध्यान में रखकर इस कार्य में प्रवृत्त हो गया । एक दिन महान्त परमश्रद्धेय विद्वद्वरिष्ठ श्रीरामानन्ददासजी वेदान्तीजी "श्रीरामकुञ्ज रामघाट अयोध्या" से इस ग्रन्थ के विषय में चर्चा चली तो उन्होंने बताया कि बांदा के एक पण्डितजी इस ग्रन्थ का अनुवाद कर रहे हैं हमारे राम ने कहा कि तब तो ठीक है यदि वे अनुवाद कर रहे हैं तो पूर्वार्द्ध का अनुवाद वे कर देंगे फिर पण्डितजी से बातचीत हुई उन्होंने स्वीकार कर लिया तत्पश्चात् लेखन का कार्य शुरू हुआ । सबसे पहले हमारे राम ने पूरे ग्रन्थ का सारांश लिखा यद्यपि ग्रन्थ की दिव्यता और भव्यता के अनुरूप हमारी मति नहीं है-

क्वैष दिव्यतमो ग्रन्थ: क्वैषा मन्दा मतिर्मम ।
आकाशपुष्पवाञ्छेव प्रयासो हास्य कारक: ॥

फिर भी गुरुजनों सन्तों शास्त्रों की कृपा से अपनी वाणी और बुद्धि की पवित्रता के लिए अनुवाद में प्रवृत्त हो गया ।

तथापि विद्वज्जनसाधुसेवया, शुभाशिषा शास्त्रनिषेवणेन ।
विधूननायाशु स्वकश्मलञ्च ग्रन्थानुवादे हि प्रवर्तितोऽहम् ॥

तत्पश्चात् इस ग्रन्थ के गूढ़ विषयों एवं स्वामीजी के प्रवचनों का एकत्र संग्रह किया । यह दिव्य संग्रह सभी के लिए अत्यन्त उपयोगी है दुर्भाग्यवश इस ग्रन्थ के साथ प्रकाशित नहीं हो सका । तत्पश्चात् उत्तरार्द्ध

का अनुवाद लिखा गया । पण्डित श्रीगयाप्रसादशास्त्रीजी ने सूचना दी कि पूर्वार्द्ध का अनुवाद तैयार है श्रीवृन्दावन श्रीगोरेदाऊजी आश्रम से श्रीमनीषकुमारशास्त्री को पण्डितजी के घर भेजकर अनुवाद की कापी मंगवायी । उसको लेकर महान्त श्रीहरिशंकरदासजी महाराज के पास आये अग्रपीठाधीश्वर श्रीराघवाचार्यजी महाराज से मुद्रण के लिए बातचीत हुई "महाराजजी ने श्रीराजेन्द्र तिवाड़ीजी (लोकमित्र, सूरजपोल) को बुलवाया और मुद्रण का कार्य सौंप दिया । प्रूफ संशोधन हेतु अनुवाद छपकर जब हमारे पास आया तब पता चला कि पं. श्रीगयाप्रसाद त्रिपाठी जी ने संस्कृत गद्यों का भाषानुवाद ही किया है । फिर हमारे राम ने महान्त श्रीहरिशंकरदास जी महाराज से निवेदन किया कि आप पूर्वार्द्ध के अनुवाद को देखकर यथासम्भव लिख दें । श्रीहरिशंकरदास जी और हमारे राम ने यथाधीतं यथामति पं. श्रीगयाप्रसाद त्रिपाठी जी के द्वारा लिखित अनुवाद को देखकर आवश्यकतानुसार संशोधन एवं परिवर्धन किया है इसीलिए अनुवादक के रूप में पं. श्रीगयाप्रसाद-शास्त्री, तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य एवं मं. श्रीहरिशंकरदास जी वेदान्ती का नाम लिखा गया है ।

आचार्य विजय ग्रन्थ के 'उत्तरार्द्ध' का अनुवाद यथाधीतं यथामति दास ने किया है । "श्रीसियाराम बाबा की बगीची" ढेर के बालाजी एवं श्रीकनकबिहारी मन्दिर गलता गेट इन स्थानों पर रहकर ही दास ने ग्रन्थ को मूर्तरूप देने का कार्य किया है अत: महान्त श्रीहरिशंकरदासजी एवं महामण्डलेश्वर श्रीसियारामदासजी महाराज के हमारे राम सदा आभारी रहेंगे । महान्त श्रीहरिशंकरदासजी के विशेष सहयोग से ही यह कार्य पूर्ण हुआ है अत: पूज्य महाराज जी के हम हृदय से आभारी हैं । उत्तरार्द्ध में कुछ स्थलों पर देवर्षि श्रीकलानाथजी शास्त्री ने अर्थों का स्पष्टीकरण किया है एतदर्थ हमारे राम उनके भी सदा आभारी हैं । अनेक सन्तों महात्माओं विद्यार्थियों के विशेष सहयोग एवं सौजन्य से यह महान् कार्य पूरा हुआ है । अन्त में अपने उपास्यदेव श्रीसीतारामजी एवं समस्त पूर्वाचार्यों के चरणों में प्रार्थना है कि आप ऐसी कृपा करें कि हमारे अग्रपीठाधीश्वर स्वामी

श्रीराघवाचार्यजी महाराज वर्षों ऐसे ही स्वस्थ एवं समृद्ध बने रहें ताकि हमारे सम्प्रदाय के महनीय कार्य उनके द्वारा सम्पन्न होते रहें । वैसे तो प्रयास किया है कि पुस्तक शुद्ध छपे फिर भी प्रेस या नेत्रदोष के कारण त्रुटियां हो सकती हैं अत: अपने सुहृद्विज्ञपाठकों के पूज्य चरणों में श्रीहरिकृष्णशास्त्री के शब्दों में प्रार्थना है-

सिद्धान्त प्रतिपादने क्वचिदहो दृश्येत काचित्त्रुटिः,
किं वा व्याकरणाञ्चिता विकृतिरप्यक्षीक्षिता स्यात् क्वचित् ।
कारुण्यस्रुतिनिर्झराः सहृदया विद्वद्वरेण्याः समे,
बालं मुग्धमवेक्ष्य बालभणितिं मत्वानुगृहणन्तु माम् ॥

अन्त में सभी महापुरुषों से प्रणति निवेदनपूर्वक प्रार्थना है-

होहु प्रसन्न देहु वरदानू । साधु समाज भनिति सनमानू ॥
सीताराम चरण रति मोरे । अनुदिन बढ़ऊं अनुग्रह तोरे ॥

दासानुदास
तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य,
श्रीगोरेदाऊजी आश्रम परिक्रमा मार्ग,
वृन्दावन मो. ९४११०६६३०८

हैं ताकि
वैसे तो
कारण
णों में

त्।

ुदास
ार्य,
मार्ग,
३०८

प्राक्कथन

सीतानाथ समारम्भां शुकबोधायनान्विताम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम् ।
आदि में सीतानाथ हैं मध्य में रामानन्द ।
निजगुरुतक सब गुरुन को बन्दौ मैं सानन्द ॥

विशिष्ट कार्यों की पूर्ति उचित समय आने पर ही होती है इसीलिए तो कहा गया है कि-

कालः पचति भूतानि कालः संहरते तथा ।
कालः सुप्तेषु जागर्ति कालो हि दुरतिक्रमः ॥

महाभारत शांति पर्व के इस वाक्य से यह सिद्ध होता है कि सभी काल के अधीन है यथा "सर्वं कालकृतं मन्ये" । इससे यह सिद्ध है कि महापुरुषों का अवतार भी समयानुसार होता है । आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य का प्राकट्य भी उस समय हुआ जब भारत में यवन संस्कृति सनातन धर्म पर बलात्थोपी जा रही थी । तब द्वादश महाभागवतों के साथ साक्षात् श्रीरामजी ही इस धराधाम पर अवतीर्ण हुए यथा "**रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले**" वैश्वानर संहिता के इन वचनों के अनुसार जब श्रीरामजी रामानन्दाचार्य के रूप में आये हैं तो उनके कार्य भी उनके (श्रीराम) जैसे होने चाहिये अतः जिस प्रकार श्रीरामजी ने हरिजन गिरिजनगीध कोल भील निषाद न शबरी सहित वानरों को भी गले से लगाया । उसी प्रकार श्रीरामानन्दाचार्यजी ने सनातन धर्म की अनावश्यक रूढ़ियों को तोड़कर सभी को भगवान् की भक्ति प्रपत्ति

करने का अधिकार है इस बात को शास्त्रीय वचनों से सिद्ध करते हुए कबीर, धन्ना, पीपा, रविदास, पद्मावती आदि को स्वीकार कर यथार्थ के धरातल पर आचरण करके सनातन धर्म को सही दिशा प्रदान की, जिसका पूर्णतया दर्शन इस ग्रन्थ के अध्ययन से होगा ।

इनकी इस प्रकार की उदारता के कारण ही आप के जीवन चरित्र से सम्बन्धित अनेक रचनायें हुई । जैसे (१) "प्रसंगपारिजात-श्रीचैतन्यदासजी की पैशाची भाषा में (२) "श्रीरामानन्ददिग्विजय" श्रीस्वामीभगवदाचार्यकृत संस्कृत महाकाव्य । (३) आचार्य जीवनवृत्त, श्रीमनमोहनाचार्य, (४) सद्गुरु सुयशमालिका", श्रीशिरोमणिदासजी, (५) "जगद्गुरु रामानन्दाचार्य चरित्र गद्य में स्वामी जयरामदेवजी द्वारा प्रणीत (६) श्रीरामानन्दाचार्य चरितामृत" पद्यों में स्वामी जयरामदेव जी महाराज द्वारा प्रणीत (७) "द्वादश महाभागवत" महाकवि श्रीक्षितीशतनयसखाकृत् (८) "शंखनाद" (९) "काशी मार्तण्ड" (१०) पायसपायी ये तीनों उपन्यास क्रमशः इन्द्रा स्वप्न, अमिता शाह एवं डॉ. दयाकृष्ण विजयवर्गीय "विजय" के द्वारा (११) "पूर्वाचार्य चरितामृतम्" श्रीरामरिछपालदासजी (१२) श्रीरामानन्दाचार्यः" श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यकृत (१३) श्रीरामानन्दगाथा" रामभक्त श्रीबलरामदासजी "वैष्णव कबीर" श्रीबालकरामविनायकजी के द्वारा । स्वामी श्रीरघुवराचार्य एवं स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी के अतिरिक्त और कई लोगों ने स्वामीजी की जीवनी पर अनेक शोध प्रबन्ध भी लिखे हैं जिनका उल्लेख करके लेख को बढ़ाना नहीं चाह रहा हूँ । किन्तु यह सत्य है कि अनेक विद्वानों ने इनके सम्प्रदाय व इन पर दृष्टि डालकर अपनी लेखनी को कृतकृत्य किया, जिनमें मुसलमान व शंकर सम्प्रदायानुयायी भी है जिनमें से श्रीसच्चिदानन्द जी दन्ताली गुजरात वालों के बारे में मं. श्रीरामावतारदास (रत्न) के द्वारा मालूम हुआ कि इन्होंने आचार्य श्री के बारे में गुजंराती में बहुत ही सुन्दर निबन्ध लिखकर जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य के जीवन चरित्र को सर्वग्राह्य सिद्ध करते हुए उनमें वास्तविक जगद्गुरुत्व का प्रतिपादन किया है ।

करते हुए
यथार्थ के
दान की,

क जीवन
ारिजात-
ग्विजय''
ीवनवृत्त,
ी, (५)
ा, प्रणीत
महाराज
सखाकृत्
ये तीनों
ायवर्गीय
नदासजी
(१३)
कबीर''
स्वामी
वनी पर
बढ़ाना
इनके
किया,
में से
ारदास
ुजंराती
जीवन
त्व का

इस शृंखला में प्रारम्भ के दो ग्रन्थों के पश्चात् गोलोकवासी समादरणीय गोस्वामी श्रीहरिकृष्ण शास्त्रीजी के द्वारा- ''शिवराजविजय'' के समान ''श्रीआचार्यविजय'' नामक ग्रन्थ के माध्यम से श्रीरामानन्दाचार्यजी के सर्वांगीण जीवन पर प्रकाश डालते हुए संस्कृत भाषा में गद्यमहाकाव्यों की कतार में भारत भूमि पर पंचम महाकाव्य की रचना की गई है । जिनकी बहुमुखी प्रतिभा का प्रतिपादन इन्हीं के भांजे देवर्षि श्रीकलानाथशास्त्री जी ने अपने लेख में किया है । अतः उधर न जाकर इस समय मैं श्रीरामानन्द संप्रदाय की पश्चिमाम्नाय पीठ के साकेतवासी श्रीरामेश्वरानन्दाचार्य का स्मरण कर रहा हूँ जिन्होंने श्रीरामानन्द सम्प्रदाय को असीम साहित्य प्रदान किया । इसके साथ आपने विविध विश्वविद्यालयों में श्रीरामानन्द वेदान्त के पठन पाठन की व्यवस्था की । आपकी लेखनी व प्रेरणा यावज्जीवन संप्रदाय के लिये कार्य करती रही । उन्हीं के श्रीमुख से दास को यह विदित हुआ कि अधिक संपत्ति को लोक कल्याणार्थ राष्ट्रीय खजाने में दान करने की प्रेरणा वाला नाटक ''आदर्शौदार्यम्'' जो कि इन के द्वारा रचा गया जिसका प्रकाशन भारत सरकार से प्रदत्त आर्थिक सहायता से हुआ । उस समय आप कौशलेन्द्र मठ में ही थे । इस कार्य के कुछ दिन बाद आपने स्वयं आचार्य जी से किसी विशिष्ट नायक प्रधान गद्य काव्य की रचना के बारे में चर्चा की तो मैंने (स्वामी श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी) उनसे ज. गु. श्रीरामानन्दाचार्य के जीवन चरित्र को लिखने की प्रेरणा के साथ साहित्य भी उपलब्ध कराया जिससे उन्होंने लेखन का कार्य करीब-करीब पूरा कर लिया लेकिन बिना बताये चले गये । फिर किस प्रकार अयोध्या जाकर सन्त महन्तों की आर्थिक सहायता से इसका प्रकाशन करवाया ये बात मुझे बाद में मालूम हुई । इसमें मैं श्रीसीताराम जी की ही प्रेरणा मानता हूँ कि उन्होंने (श्रीरामजी) पण्डित जी को अयोध्या बुलाकर यह कार्य करवाया । मेरी (हरिशंकरदास वेदान्ती की दृष्टि) में यह ग्रन्थ श्रीरामानन्द संप्रदाय के ही नहीं अपितु मानवतावादी सभी लोगों के लिये ग्राह्य है इसीलिये श्रीमनुजी के द्वारा बसायी गयी पुरी के महामानवों (महात्माओं) के द्वारा

श्रीसीताराम जी ने लोककल्याण के लिये इसे यहाँ से प्रकाशित करवाना चाह रहे थे इसीलिये ऐसा हुआ ।

मुझे यह ग्रन्थ शास्त्री कक्षा के अध्ययन काल में मेरे गुरुद्वारा श्रीकरतलिया बाबा के आश्रम से प्राप्त हुआ जिसमें दाताओं की सूची में पूज्य गुरुदेव श्रीसूर्यनारायणदास का भी नाम था । स्थान में इसकी उपयोगिता न समझकर जयपुर स्थान पर ले आया जहाँ पर साकेतवासी पूज्य महाराज श्रीप्रेमदास जी शास्त्री ने इसे देखा और भूरि भूरि इसकी प्रशंसा की । फिर सन् २००० में पूरे भारत में जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी का सप्त शताब्दी महोत्सव धूमधाम से मनाया जा रहा था उसी क्रम में परमपूज्य खोजी द्वाराचार्य ब्रह्मपीठाधीश्वर त्रिवेणी धाम के परमाचार्य श्रीनारायणदास जी महाराज के सान्निध्य में दशहरा कोठी, जयपुर में ज. गु. रामानन्दाचार्य के लीला मञ्चन के साथ जयपुर के विशिष्ट विद्वानों के अतिरिक्त देश के कई मूर्धन्य विद्वान भी आमन्त्रित हुए जिसमें दास को जब कुछ कहने का अवसर आया तो दास ने इस ग्रन्थ की महिमा बताते हुए इस के हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता बताई तो श्रीरामदुलारेदास जी ने कहा यह कार्य श्रीलालबहादुर संस्कृत विश्वविद्यालय में कार्यरत श्रीजयकान्तसिंहजी को सौंप दिया गया है किन्तु लगभग ५ वर्ष व्यतीत होने पर भी जब कोई प्रगति नहीं दिखाई दी तो त्रिवेणी धाम के श्री मांगीलाल शर्मा व श्री रामस्वरूप जी मिश्र की प्रेरणा से इस उक्ति के अनुसार यथा- **अनुगन्तुं सतां वर्त्म कृत्स्नं यदि न शक्यते । स्वल्पमप्यवगन्तव्यं मार्गस्थो नावसीदति ॥** अर्थात् सज्जनों के रास्ते पर पूरी तरह नहीं चल पाने पर भी सही मार्ग पर थोड़ा चलने पर भी कोई हानि नहीं होती है "यत्नेकृतेऽपि नहि सिद्धयति कोऽत्र दोष:" या "जो बालक कह तोतरिबाता । सुनहिमुदित मन पितु अरु माता । का सहारा लेकर मेरा किया हुआ इस का अनुवाद जनवरी २००५ से "ब्रह्मपीठ सन्देश" में धारावाहिक रूप में प्रकाशित होने लगा जिसकी देवर्षि कलानाथ शास्त्री के अलावा कई लोगों ने प्रशंसा की ।

लेख के प्रारम्भ में कहे गये श्लोक के अनुसार बिना समय के कुछ नहीं होता । जयपुर श्रीरामानन्द संप्रदाय का गढ रहा है गढ ही नहीं ज. गु. श्रीरामानन्दाचार्य के साकेत गमन के पश्चात् उनके सिद्धान्तों को प्रचार करने के लिये श्रीकृष्णदास जी पयोहारी जी द्वारा प्रतिष्ठापित गलतागद्दी प्रधान केन्द्र बनी, जिससे श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की ३६ गद्दियों में से "रैवासाधाम" प्रभृति १७-१८ प्रधान पीठों का प्रादुर्भाव हुआ । इसके अलावा श्रीअनुभवानन्दाचार्य की द्वारा गद्दी श्रीबालानन्द मठ" भी यहीं है । ऐसे गढ से जब मैं सन् १९८३-८४ में श्रीसरयू रामानन्द संस्कृत विद्यालय प्रेम दरवाजा अहमदाबाद गया तो वहाँ पर श्रीरामानन्दाचार्य के नाम से विद्यालय-महाविद्यालय को देखकर विचार मग्न हुआ कि आखिर जयपुर में ऐसा क्यों नहीं । परन्तु इसमें गलता जैसी विरक्तों की प्रधान पीठ में कुप्रबन्ध, व स्वार्थी जनों को ही कारण माना जायेगा । इस वेदना को भी सप्त शताब्दी महोत्सव के क्रम में लड़ी वालों की बगीची में श्रीत्रिवेणी धामकेशी महाराजजी से कहा जिसका उत्तर महाविद्यालय के लिये जगह देखी जा रही है यह सुनकर बड़ा आनन्द हुआ फिर तो क्या श्रीकृष्णदासपयोहारी स्वरूप पूज्य श्रीनारायणदासजी त्रिवेणी धाम के आशीर्वाद एवं श्रीअग्रदेवाचार्य स्वरूप पूज्य श्रीराघवाचार्य के सत् प्रयासों से जगद्गुरुरामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय ही बन गया । इसके बाद अब तो दास के यहाँ भी इन्हीं महापुरुषों के आशीर्वाद से "श्रीरामानन्दाचार्य वेदाश्रम का शुभारम्भ हो गया है । और अहमदाबाद के जैसे यहाँ से भी पुस्तकों का प्रकाशन भी प्रारम्भ हो गया है । जिसकी कड़ी में "श्रीआचार्य विजय" संप्रदाय की एक अमूल्य निधि है जिसके त्वरित अनुवाद के लिये पूज्य श्रीराघवाचार्यजी ने मुझसे श्रीरमाकान्त पाण्डे जी के लिये कहा, किन्तु कई महीने बाद भी सन्तोषप्रद जवाब न मिलने के कारण जब मैंने पूज्य महाराजजी को इस विषय की जानकारी दी तो पूज्य महाराज श्री ने विद्वद्वरेण्य स्व विद्यागुरु श्रीपारसनाथ द्विवेदी जी को कहा किन्तु उनके पास भी अन्यान्य कार्यों की अधिकता के कारण यह कार्य सम्भव नहीं हो

सका, तब मेरे द्वारा न्यायाचार्य श्रीतुलसीदास जी को कहलवाया । श्रीतुलसीदासजी ने तुरन्त स्वीकृति प्रदान कर दी वैसे भी आप संप्रदाय के सजग प्रहरी की तरह रचनात्मक कार्यों के लिये सदैव तैयार रहने के साथ बड़े ही परिश्रमी स्वभाव के सरल सन्त हैं । आप श्रीअवध में अध्ययन काल से ही अपने से नीची कक्षा के विद्यार्थियों को पढाने में रूचि रखते, विशेषकर बालक साधुओं को पढ़ने के लिये प्रेरित करते रहते तथा यथा संभव उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये व्यवस्था करते रहते थे आप की अध्ययन शैली की अयोध्या और काशी के विद्यार्थियों के बीच आज भी प्रशंसा की जाती है, इसी से प्रसन्न होकर श्री मणीरामदासजी की छावनी के पूज्य श्रीनृत्यगोपालदास जी महाराज ने आपको छावनी के विद्यालय का प्राचार्य बनने के लिये आमन्त्रण दिया, किन्तु फक्कड़ी स्वभाव के कारण आपने उसे नहीं स्वीकार किया । जिस समय आप काशी में पढ़ रहे थे उस समय वैष्णव छात्रों के हितार्थ ''वैष्णव साधुच्छात्र समिति'' बनाई जिसमें श्रीश्रवणदास प्रभृति सन्तों को पदाधिकारी बनाकर कार्य करना चालू किया, इस क्रम में आप लोगों ने मुझे भी उससे जोड़ा । इस समिति के माध्यम से गो. श्रीतुलसीदास जी की जयन्ती प्रभृति आचार्यों के उत्सवों के माध्यम से छात्रों की वाद-विवाद प्रतियोगिता रखकर उन्हें प्रोत्साहित करते रहते थे । इसी क्रम में सन् २००१ प्रयागराज महाकुम्भ के अवसर पर श्रीराघवाचार्य महाराज के सहयोग व श्रीनारायणदास जी महाराज के सान्निध्य में विशिष्ट साधु विद्यार्थियों की प्रतियोगिता रखी, जिसमें खूब पारितोषिक वितरित करवाया । सम्प्रदाय के प्रति सजगता का परिचय देते हुए आपने ''आनन्द भाष्य'' के विकल्प में श्रीरामभद्राचार्य जी के द्वारा स्वीकृत ''राघवकृपाभाष्य'' को रखवाता सुन श्रीराघवाचार्य जी को समाचार दिया फिर तो श्रीनारायणदास जी महाराज त्रिवेणी धाम के सान्निध्य में त्वरित विद्वानों को बुलाकर उस कार्य से उनको विरत किया गया ।

इस प्रकार सम्प्रदाय के लिये कार्य करते हुए आप ने काशी से नव्य न्याय से आचार्य परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की । फिर अयोध्या

आकर धर्म प्रचारार्थ कथा प्रवचन को विषय बनाकर अयोध्या वृन्दावन रहने लगे, अयोध्या में रहकर पञ्चमुखी हनुमान मन्दिर के महन्त "रामायणव्यास" श्री कमलादास जी के कन्धों से कन्धा मिलाकर ऐतिहासिक "श्रीरामचरित मानस विद्यापीठ" वा तुलसी ग्रन्थागार की स्थापना कर इसी स्थल पर प्रतिवर्ष श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी की जयन्ती पर विविध प्रतियोगिताओं का आयोजन कराकर स्वर्ण, रजत, कांस्य, पदकों को प्रदान कराकर अध्ययनशील विद्यार्थियों का मनोबल बढाते हैं। इस कार्यक्रम में अन्य सन्तों के साथ श्रीराघवाचार्य जी की विशेष उपस्थिति के साथ आर्थिक सहयोग रहता है। मैंने आपकी एक विशेषता प्रत्यक्ष देखी है कि आपको जहाँ कहीं से कुछ भी प्राप्त होता है उसे साधु सेवार्थ खर्च करने में देरी नहीं करते। अपने से बड़े व गुरुजनों के प्रति अगाध श्रद्धा और सरलता आपको अन्यों से अलग करती है इसीलिये आपने पं. श्रीगयाप्रसादजी के साथ यथा सम्भव मेरे रामजी का सहयोग लेकर इस ग्रन्थ के कार्य को पूर्णता की ओर ले जाकर साधुवादिता का कार्य किया हैं। परमपूज्य रैवासा पीठाधीश्वर गो ब्राह्मण सन्त सेवी श्रीराघवाचार्य जी महाराज का जीवन इस उक्ति का मूर्तिमानरूप हैं। यथा- **दाता न दापयति दापयिता न दत्ते, यो दान दापन परो मधुरं न वक्ति। दानञ्च दापनमथो मधुरा च वाणी, त्रीण्यप्यमूनि खलु सत्पुरुषे वसन्ति।** अर्थात् जो स्वयं दान देता है वह दिलाता नहीं, जो दिलाता है वह देता नहीं और जो देता दिलाता है वह मधुर नहीं बोलता, लेकिन सज्जन में ये तीनों गुण होते हैं। ऐसे सम्प्रदायनिष्ठ परम वीतराग पूज्य महाराज जी के द्वारा कई ग्रन्थ रत्नों का पूर्व में प्रकाशन कराया जा चुका है जिनकी सूची ग्रन्थ के अन्तिम पृष्ठ पर अंकित है। उन्हीं ग्रन्थों के मध्य शिरोमणि भूत इस विशाल कलेवर वाले ग्रन्थ का भी आपके द्वारा प्रकाशन कराया जा रहा है। अतः मैं अपने प्यारे-प्यारे पूज्य महाराज श्री के लिये श्रीजानकीनाथ से प्रार्थना करता हूँ कि वो उनको स्वस्थ रखते हुए श्री सम्प्रदाय के उत्थान हेतु कार्य करने की पूर्ण क्षमता प्रदान करें। यद्यपि इस ग्रन्थ के लिये देवर्षि श्री कलानाथ शास्त्री,

श्रीतुलसीदासजी न्यायाचार्य जी मेरे राम वा राजेन्द्र तिवाड़ी जी ने सावधानीपूर्वक शुद्धता के साथ सही रूप में सभी के सामने लाने का प्रयत्न किया है फिर भी **"गच्छत:स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादत:"** इस उक्ति के अनुसार कि चलते-चलते असावधानीवश कहीं प्रस्थखन हो जाता है तब **"हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति पण्डिता:"** दुर्जन लोग हँसते हैं किन्तु विज्ञ लोग सान्त्वना प्रदान कर भूल को सुधार देते हैं। इसी प्रकार यहाँ पर भी मैं विज्ञ पाठक गणों से आशा करता हूँ। वैसे भी इस शरीर से जो कुछ भी इस ग्रन्थ के लिये हुआ है वह आचार्य कृपा से ही हो पाया है। इति शुभम् !

भक्तभगवन्त श्रीआचार्य चरणरेणुकृपाकांक्षी
मं. हरिशंकरदास वेदान्ती,
मंदिर श्री रघुनाथजी, सियाराम बाबा की बगीची,
ढेर का बालाजी, जयपुर

"
भवसागर मे
सनातनवैदि
अपनी विभृ
अवतारों में
। 'रामानन्द
भगवान्
श्रीरामानन्दा
विस्तार क
शरणागति
उठकर क
भगवद्विग्रह
प्राञ्जल लौ
श्रीहरिकृष्ण
कर अयोध
में होने के
के लिए उ
तुलसीदास
सत्प्रयासों
स
साकेतवासी
में पड़ी रह
जयपुर, म
वितरित कि

जी ने
लाने का
मादत:''
थखन हो
र्जन लोग
देते हैं ।
वैसे भी
कृपा से

पाकांक्षी
वेदान्ती,
बगीची,
जयपुर

कृतज्ञताज्ञापन

''**आचार्यं मां विजानीयात्**'' आचार्य भगवान् का स्वरूप होता है । भवसागर में पड़े हुए आपामर जीवों के आत्यन्तिक दु:खनिवृत्ति, धर्मप्रवृत्ति एवं सनातनवैदिकधर्म संस्कृति संरक्षण हेतु शरणागत वत्सल भगवान् स्वयं अथवा अपनी विभूति अंश कला आदि के स्वरूप में अवतरित होते हैं । ऐसे ही अवतारों में भगवान् श्रीरामानन्दाचार्य साक्षात् श्रीराम प्रभु के अवतारी विग्रह थे । 'रामानन्द: स्वयं राम: प्रादुर्भूतो महीतले ।'' विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त प्रवर्तकाचार्य, भगवान् श्रीबोधायनाचार्यजी के निर्दिष्ट मार्गों का समाश्रयण कर श्रीरामानन्दाचार्य भगवान् ने श्रीसीतारामोपासक रामानन्दीय वैष्णव परमपरा का विस्तार करते हुए ''सर्वे प्रपत्तेरधिकारिणो मता:'' समस्त प्राणियों को शरणागति का अधिकार प्रदान कर जाति एवं सम्प्रदाय परम्परा के ऊपर उठकर कबीर, रैदास आदि को शरणागति एवं मन्त्रोपदेश किया । ऐसे भगवद्विग्रह आचार्य का जीवनवृत्त सामान्य ज्ञान के लिए साङ्गोपाङ्ग सरल प्राञ्जल लौकिक, भाषा में आज तक सुलभ नही हो पाया था । गोस्वामी श्रीहरिकृष्ण शास्त्रीजी ने ''आचार्यविजय:'' नामक गद्यात्मक ग्रन्थ की रचना कर अयोध्या जी से ही सन् १९७७ में प्रकाशित भी किया, परन्तु ग्रन्थ संस्कृत में होने के कारण तदितर लोगों के द्वारा ग्राह्य नहीं हुआ, अत: सर्वजन ग्राह्यता के लिए उस ''आचार्यविजय'' ग्रन्थ का सरल हिन्दी अनुवाद भी आचार्य तुलसीदास जी पं. गयाप्रसादशास्त्री एवं मं. श्रीहरिशंकरदासजी वेदान्ती के सत्प्रयासों से सुलभ हुआ ।

सर्वप्रथम, संस्कृत प्रकाशन के अनन्तर ग्रन्थ की सैकड़ों प्रतियां साकेतवासी श्री पं. अखिलेश्वरदास जी महाराज श्रीरामकुञ्ज रामघाट अयोध्या में पड़ी रहीं । मैंने अपने गुरुदेव साकेतवासी पंडित जी की अनुमति से काशी, जयपुर, मथुरा, हरिद्वार एवं अयोध्या के समस्त पुस्तकालयों में नि:शुल्क वितरित किया । तदनन्तर सम्प्रदाय के मनीषी जन इस ग्रन्थ की उपादेयता की

ओर आकृष्ट हुए और भाषा में अनुवाद की अपेक्षा करने लगे । हमारे ज्येष्ठ गुरु भ्राता महोबा जनपद निवासी श्री डॉ. राजाभैया त्रिपाठी ने बार-बार हमें अनुवाद हेतु प्रेरित किया, परन्तु समयाभाव के कारण यह कार्य न हो सका। फिर उनकी ही प्रेरणा से हमारे गुरुभाई विद्वद्वरेण्य डॉ. गयाप्रसाद त्रिपाठी पूर्व प्राचार्य बाँदा ने यह पुनीत अनुवाद कार्य प्रारम्भ किया, और श्रीआचार्य तुलसीदास जी की प्रेरणा से पूर्वार्ध का ही अनुवाद कर शेष के लिए श्रीतुलसीदास जी को ही सौंप दिया । कालान्तर में श्रीआचार्य तुलसीदास जी एवं मं. श्रीहरिशंकरदासजी वेदान्ती ने सम्पूर्ण उत्तरार्द्ध का एवं पूर्वार्द्ध के भी भावानुवादों का भाषानुवाद कर श्री रामानन्दीय वैष्णव परम्परा का चिरस्मरणीय उपकार कर आचार्य चरणों में अपनी श्रद्धा को समर्पित किया ।

हम अपने सहृदय मित्र विद्वद्वरेण्य आचार्य तुलसीदास जी के प्रति इस अथक प्रयास के लिए अपना आभार एवं साष्टाङ्ग नति समर्पित करते हैं । इस आचार्य विजय ग्रन्थ के प्रकाशन में श्रीजगद्गुरु अग्रदेवाचार्य पीठाधीश्वर स्वामि श्रीराघवाचार्यजी के चरणों में श्रद्धापूर्वक नमन करते हैं, जिन्होंने इस ग्रन्थ के अनुवाद एवं प्रकाशन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की । हमें विश्वास है कि यह भाषानुवाद प्रकाशन समस्त श्रीरामानन्दीय वैष्णवों का अपने आचार्य के जीवनवृत्त को सर्वाङ्गीण साङ्गोपाङ्ग समझने में सहयोग करेगा ।

रामानन्द दास
श्रीरामकुञ्ज, रामघाट
कथा मण्डप, श्रीअयोध्याजी

श्री राघवे
को भेजते
इतना ब
श्री रामज
ज्ञान का
श्रीलक्ष्मण
जी के
कलियुग
था वैसा
कर भव
करुणा व
जगद्गुरु
जी और
प्रगट हुए
में गोस्वाम
लिखा ।
सर्वसुलभ
श्रीराघवाच
संस्थापक
एवं मं. श्री

शुभ कामना

तब तब प्रभु धरि विविध शरीरा ।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ।।

अनन्तानन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक भक्त वत्सल मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राघवेन्द्र सरकार सनातन धर्म की रक्षा हेतु कभी अपने प्रिय कृपा पात्र को भेजते हैं । कभी स्वयं आते हैं । कलियुग के प्रारम्भ होते ही तमोगुण इतना बढ़ गया कि सनातन धर्म डूबने लगा तो प्रथम भगवान् शंकर प्रभु श्री रामजी की प्रेरणा से आद्य जगद्गुरु श्रीशंकराचार्य के रूप में आकर ज्ञान काण्ड प्रधान भक्ति का प्रचार किया उनके कुछ काल के बाद श्रीलक्ष्मणजी ने श्री रामजी की प्रेरणा से आद्य जगद्गुरु श्री रामानुजाचार्य जी के रूप में आकर कर्मकाण्ड प्रधान भक्ति का प्रचार किया परन्तु कलियुग में स्व कर्तव्य से च्युत लोगों को जैसा मार्ग प्राप्त होना चाहिए था वैसा नहीं हो सका । अत: सर्वसाधारण लोग भी भगवान् का भजन कर भव पार हो जाएँ इस सुलभता को प्रकाशित करने के लिए अकारण करुणा वरुणालय भक्तवाञ्छाकल्पतरु त्रिपाद विभूति-नायक श्री राम आद्य जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य जी के रूप में तीर्थराज प्रयागमें श्रीपुण्यसदन जी और श्रीसुशीला जी को माता पिता होने का गौरव प्रदान करते हुए प्रगट हुए । स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य जी के पावन चरित्रों को सरसदेवभाषा में गोस्वामी श्रीहरिकृष्णशास्त्री जी ने "आचार्य विजय" ग्रन्थ के रूप में लिखा । संस्कृत भाषा में लिखित इस ग्रन्थ को सर्वबोध गम्य एवं सर्वसुलभ करने के लिए जगद्गुरु अग्रदेवाचार्य पीठाधीश्वर स्वामी श्रीराघवाचार्यजी की सत्प्रेरणा से श्रीमद् रामचरितमानस विद्यापीठ के संस्थापक आचार्य श्रीतुलसीदासजी, न्यायाचार्य पं. श्रीगयाप्रसादशास्त्री जी एवं मं. श्री हरिशंकरदासजी वेदान्ती ने इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद कर

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की महती सेवा की है । तथा प्रकाशन का श्रेय प्रात: स्मरणीय ऋषिकल्प जगद्गुरु अग्रदेवाचार्य पीठाधीश्वर स्वामी श्री राघवाचार्य जी महाराज को दिया जो श्रीसंप्रदाय के प्रचार-प्रसार में सदैव तत्पर रहते हैं । श्रीस्वामी जी प्रतिवर्ष अयोध्या के राम घाट में प्रस्थापित श्रीमद्रामचरितमानस विद्यापीठ में श्रीमद् गोस्वामि तुलसीदास जयन्ती समारोह में प्रतिभावान वैष्णव छात्रों को स्वर्ण, रजत, कांस्य पदक अंग वस्त्र दक्षिणा देकर उत्साहित करते हैं । इन्हीं जैसे महापुरुषों के लिए गोस्वामी तुलसीदासजी ने लिखा है ।

पर उपकार वचन मन काया । सनत सहज स्वभाव खगराया ॥

वास्तव में इस कार्य को सम्पादन कर के समाज का बड़ा उपकार किया है ।

भक्त चरणानुचर

कमलादास (व्यासजी), अध्यक्ष

श्रीमद् रामचरितमानसविद्यापीठ श्रीरामघाट, अयोध्याजा

अभिमतम्

अविस्मृत पत्नीवियोगव्यथो यान दुर्घटनाजन्य पौत्रीयव्याधिबाधितश्चाऽस्वस्थमना अपि 'सदा सदाज्ञा परिपालनीया' इति सूक्तिं स्मारं स्मारं ध्यायं ध्यायञ्चावितथालौकिककथं श्रीदाशरथिं तद्रूपञ्चानन्दकन्दं श्रीमद्रामानन्दं-तदीयदिग्विजयाह्वयं, श्रीहरिकृष्णनिरूपित सादृश्याश्रयश्रीहरिकृष्णकवि कौकिलकृतं, स्थालीपुलाकन्यायेन कथं कथमपि पाठं पाठं काव्यमिदं बाणानुकरणम् उतवा यशः शरीरस्य बाणस्यापि प्रशिक्षणं, यद्वाऽऽत्मनीनं कवनकर्मणि निष्णातता निदर्शनम्, इत्येवं कल्पयन्तोभ्युदय निःश्रेयसप्राप्तये सुतरां समुचितं प्रायतिष्ट महाकविरित्येवं सुदृढं निश्चिनुमः ।

यद्यपि लक्षणग्रन्थानुसारं महाकाव्येऽस्मिन् यथा प्रकरणं गुणदोषसमीक्षणं वस्त्वलङ्कार रसध्वन्यादि विषयक विवेचनं समय सापेक्षमस्ति । तथापि मान्यानां हिन्दयां भावार्थबोधक टीकाकृतां दर्शं दर्शं समाचरिता चिरकारिता चेत्तोवृत्तिं काञ्चिद् इवात्र ससमीक्षणं संस्तुतिं प्रस्तुमः-

नात्रातीव प्रकर्तव्यं दोषदृष्टिपरं मनः । दोषो ह्यविद्यमानोऽपि तच्चितानां प्रकाशते ।।

इत्यभियुक्तोक्तिं प्रतिपलमनुशीलयन्तो वयं सर्वथा तटस्थसमीक्षकतामावहन्तोऽपीत्थं विनिवेदयामः-

लक्षणग्रन्थेषु 'रसापकर्षकाः दोषाः द्विविधा उक्ताः, नित्याऽनित्याश्चेति । काव्येऽस्मिन् ये नित्यदोषाः दृष्टिपथमायाताः ते त्ववश्यं

संशोधनीया इति लाक्षणिकाचार्याणां मत मनुसृत्य निदर्शनतयैव विनिवेदयामः-

१. यथा, महाकविना बहुत्र 'भगवदीय' शब्दः काव्ये प्रयुक्त तत्रः 'भगवतीय' इत्येव साधु शब्दः । अत्र जश्त्वं न भवति ।

२. 'अकारणाऽऽविष्कृतवैरदारुणा' इत्यत्र दारुणशब्दो वैर विशेषणम् अतो ''विशेषणं विशेष्येण बहुलम्' इति सूत्रेण दारुणशब्दस्य पूर्व निपातस्त्वावश्यकः विशेषणमुपसर्जनाम्, उपसर्जनं पूर्वम्, इतीदमपि पाणिनीयानुशासनस्पष्टम् ।

३. विविधरासायनिकविस्फोटकपदार्थोद्भूतप्रचण्डानलज्वालामालावलीढं भव्यभवनं भस्मसात् कर्तुकामा' इत्यस्मिन् वाक्ये 'मालावलीभि'रीति करण तृतीयान्तपदमेव साधु तत्स्थाने भावक्तान्त-मवलीढपदमसाध्वेव । अन्येऽपि च ''विषयिकी' प्रभृतयश्चिन्त्य प्रयोगाअपि चिंतकीयाः ।

४. किञ्च निहितार्थता काव्यदोषोऽपि दूषयत्येव कृतिम्, इति कृतिनः सम्पादकमहाभागा अनुभवन्तु ।

इत्थमन्यत्रापि सूक्ष्मेक्षिकयाऽवलोकनीयाः संशोधनीयाश्च सर्वे दोषाः । अथवा **'एकोऽपि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः'** इति कालिदासोक्त्यनुसारं दोषब्रजे ह्येकत्वमारोप्य दोष परिमार्जनस्यावश्यकतैव नोदेति ।

ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः । उत्कर्षहेतवस्ते स्यु रचलस्थितयो गुणाः ॥

यथा प्रकरणं प्रसादमाधुर्यौजो गुणा अपि शब्दार्थोमयालङ्काराः वस्तुध्वनयश्च महाकाव्येऽस्मिन् प्रतिवाक्यमवलोक्यन्ते । विद्यावीररसप्रधानमिदङ्काव्यं तथापि यथा प्रकरणमन्येऽपि वात्सल्य शान्तादयो रसाः अङ्गतयाऽऽप्लावयन्ति काव्यार्थपिपासूनां पण्डितपुङ्गवानां चेतांसि । वैदर्भी प्रभृतयो रीतयोऽपि रमयन्ति मनांसि मनस्विनामिति ।

अस्तु-
मननीयं

अस्तु- एवेदानीं राष्ट्रियताप्रधानसमाजनिर्माणे काव्यमिदमतीव सहायकं, मननीयं पठनीयञ्चास्ति-

गयाप्रसाद तुलसीदास श्रीहरिशङ्कराः ।
आचार्य विजयं दिव्यं हिन्दयां साध्वन्ववादिषुः ॥
रामानन्द जगद्गुरोर्यतिपतेर्ब्रह्मोद्यविद्यावतो
दिव्यं दिग्विजयं रसैकनिचयं व्यङ्ग्यैरभिव्यञ्जितम् ।
विद्यावीररसः पुनः प्रतिपदं चेतांसि चेतस्विनां
काव्यं चारुचमत्करोतितदिदं पापठ्यतां श्रेय से ॥
इति मामकीना सम्मतिः ।

आचार्यो बदरिप्रसाद शास्त्री ''प्रपूर्णा''
(राष्ट्रपति सम्मानितः)
व्याकरण-पीठाध्यक्षः, ज. रा. रा. सं. विश्वविद्यालय,
जयपुर ।

आचार्यविजय के प्रणेता गोस्वामी हरिकृष्णशास्त्री का जीवनवृत्त

-देवर्षि कलानाथ शास्त्री

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य के जीवन, दर्शन, संदेश और वेदान्त सिद्धान्तों पर सर्वाङ्गपूर्ण कालजयी संस्कृत गद्यबद्ध विशाल ग्रन्थ "आचार्यविजय" के प्रणेता गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री अपरा काशी कही जाने वाली जयपुर नगरी के ही विद्वद्रत्न थे । जयपुर के निकटस्थ महापुरा ग्राम के वे जागीरदार भी रहे । अपरा काशी जयपुर में पनपी संस्कृत विद्वत् परम्परा में बहुत से ऐसे यशस्वी कवियों का अध्याय अब समाप्त हो चला है जिन्होंने पिछली दो-तीन सदियों में महत्त्वपूर्ण साहित्य सर्जना की थी किन्तु अब अपरिज्ञात हो चले हैं । ऐसा ही एक परिवार था तांत्रिक शिरोमणि शिवानन्द गोस्वामी का परिवार जो द्रविड देश से जयपुर बसने से पूर्व ही यहां आकर बसे थे और जिनके कुल में एक से एक बढ़कर तंत्रज्ञ और कवि हुए । इस परिवार की अंतिम कड़ी थे गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री जिन्होंने अपने बहनोई भट्ट मथुरानाथ शास्त्री की तरह ही पद्य, गद्य, कथा, उपन्यास आदि सभी विधाओं में विपुल लेखन किया, जीवनी और चम्पू काव्य भी लिखे । राजस्थान संस्कृत अकादमी का माघ पुरस्कार प्राप्त किया और इस वंश में संस्कृत सर्जना का एक अध्याय समाप्त कर चले भी गये । जयपुर बसाने वाले सवाई जयसिंह के पिता विष्णुसिंह के समय जयपुर के पास भांकरोटा के निकट अजमेर रोड़ पर विद्यमान महापुरा ग्राम में आकर बसे गोस्वामी शिवानन्द

(शिरोमणि गोस्वामी) तन्त्र शास्त्र के अप्रतिम विद्वान् थे । इनका समय १७वीं सदी का उत्तरार्द्ध है । इनके लिखे तन्त्र शास्त्र के "सिंहसिद्धान्तसिन्धु" आदि अनेक ग्रन्थ तंत्र शास्त्र और मन्त्र शास्त्र के विश्वकोष कहे जा सकते हैं । विष्णुसिंह की शाक्त उपासना और तन्त्र शास्त्र में सर्वाधिक श्रद्धा थी । उसने इन्हें अपना गुरु बनाया, चरणोदक लिया, दीक्षा ली और महापुरा आदि पांच गाँवों की जागीर देकर यहाँ ही बसा लिया । इस परिवार की तन्त्र विद्या से बीकानेर राजवंश भी उतना ही प्रभावित हुआ था । इसलिए इनके एक वंशज़ बीकानेर में भी राजगुरु होकर गये जहाँ आज तक गोस्वामी परिवारों का दबदबा चल रहा है ।

जयपुर में तब से गोस्वामी परिवार में अनेक तन्त्रज्ञ और कवि हुए । इनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध है भर्तृहरि की तरह श्रृंगार और वैराग्य शतक लिखने वाले जनार्दन गोस्वामी जिनके शतक काव्यमाला में छप चुके हैं । महापुरा में आज भी इनके वंशज बसे हुए हैं और वहाँ की एक बस्ती जिसका नाम शिवानन्दपुरी है आज भी इस विद्वत्परम्परा का स्मरण कराती है । इसी परिवार में सन् १९०९ में गोपीकृष्ण गोस्वामी के ज्येष्ठ पुत्र हरिकृष्ण का जन्म हुआ था । इन्होंने जयपुर में संस्कृत का अध्ययन कर साहित्य, न्याय आदि विषयों में दक्षता प्राप्त की । नाथद्वारा में शुद्धाद्वैत वेदान्त का अध्ययन भी किया । अपने बहनोई भट्ट मथुरानाथ शास्त्री की प्रेरणा से ये विभिन्न छन्दों में कविता भी लिखने लगे थे और कहानियां भी । इनका विवाह ओरछा राजगुरुओं के परिवार में टीकमगढ़ में हो जाने के कारण ये वहीं शिक्षा विभाग में अध्यापक हो गये थे किन्तु पिता के निधन के बाद सन् १९४५ में वापस जयपुर लौट आये और अपनी जागीर के गांव महापुरा में शिवानन्द संस्कृत पाठशाला की स्थापना कर वहाँ गुरुकुल पद्धति से शिष्यों को पढ़ाने लगे । १०-५ शिष्यों और एक गुरु से शुरू हुई यह "शिवानन्द पाठशाला" आज एक विशाल शास्त्री पर्यन्त महाविद्यालय बन गया है । हरिकृष्ण गोस्वामी ने पहले तो जागीर कमिश्नर कार्यालय, आयुर्वेद विभाग आदि में सेवा की किन्तु बाद में ये राजस्थान में संस्कृत शिक्षा निदेशालय बन जाने पर उदयपुर के

संस्कृत कालेज में साहित्य के प्रोफेसर तथा अजमेर के संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य बन गये जहाँ से सन् १९६७ में सेवानिवृत्त होकर साहित्य रचना में प्रवृत्त हो गये ।

इनकी रचनाएँ संस्कृत की प्राय: समस्त विधाओं में उपलब्ध होती हैं । इन्होंने मौलिक कहानियाँ भी लिखीं और उपन्यास भी । अनेक उपन्यासों के संस्कृत में अनुवाद किये जिनमें रवि ठाकुर के "आंख की क़िरकिरी" उपन्यास और चतुरसेन शास्त्री के "आम्रपाली" उपन्यास का अनुवाद भी शामिल है । इन्होंने नाटक भी लिखे जिनमें से "आदर्शौदार्यम्" नामक नाटक प्रकाशित भी हो चुका है जो बोधिसत्व के द्वारा अपने एक शिष्य के सारे अपराध क्षमा कर उसको समृद्ध बना देने की कथा वस्तु पर आधारित है । **"ललित कथा कल्पलता"** में इनकी १५ संस्कृत कथाएँ संकलित हैं जिनमें छोटी बड़ी सब तरह की कथाएँ शामिल हैं । इनमें सामाजिक कथाएँ भी हैं, प्रेम कथाएँ भी, घटना प्रधान चमत्कारजनक कथाएँ भी । कुछ कहानियां एक लम्बे कथासूत्र से एक दूसरे से जुड़ी हुई है । एक उदारमना ठाकुर जसवंतसिंह (शास्त्रीय नाम का संस्कृतीकृत करके यशवन्तसिंह इन्होंने कर दिया है) के यहां माली का काम करने वाली वीरू बहुत ईमानदार है । मालिक कुछ दिनों के लिए बाहर जाता है और महिनों तक नहीं लौटता । माली बिना किसी वेतन के ईमानदारी से काम करता रहता है । उसका श्रम व्यर्थ नहीं जाता । कुछ वर्ष बाद एक वकील माली को दो हजार रुपये की थैली यह कहते हुए देता है कि मालिक की मृत्यु हो गई है और वसीयत में ये तुम्हारे लिए छोड़ गये हैं । यह है प्रतिफलम् नामक कहानी । इससे जुड़ी हुई कहानी अलग है जब कोई ठग बातें बनाकर माली से वह थैली ऐंठ ले जाता है । ठग को वह थैली एक पुराने पेड़ के कोटर में छिपानी पड़ती है किन्तु दैव योग से ऐसी घटना होती है कि कोटर में छिपी हुई वह थैली ऐंठने वाले के हाथ नहीं लगती अन्त में माली को ही मिल जाती है । इस कथा को लेखक ने शीर्षक दिया है 'यदस्मदीयं न हि तत्परेषाम् ।' इस संस्कृत मुहावरे का अर्थ है "दाने दाने पर मोहर है ।" लेखक की

शैली की विशेषता यह है वह गद्य लिखते-लिखते बीच में या तो कथोपकथन के रूप में या सुभाषित के रूप में पद्य भी लिख देते हैं । गद्य को पढ़ने से स्पष्ट लगता है कि यह एक कवि का गद्य है ।

गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री जी का एक विशिष्ट अवदान है चरित्र काव्य के रूप में उपन्यास विधा की शैली में एक विशाल जीवनी का लेखन । यह गद्यबद्ध विशाल जीवनी है स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजी की जो रामानुज, निम्बार्क, वल्लभ आदि दक्षिण भारत में आचार्यों की परम्परा में उत्तर भारत के एकमात्र ऐसे आचार्य हैं जिन्होंने रामभक्ति की भागीरथी की अवतारणा की और जिनके हजारों पीठ आज भी देश में चल रहे हैं । गोस्वामी जी के लेखन और वैदुष्य से प्रभावित होकर इन्हें अनेक पीठों के महन्तों और आचार्यों ने अपना "शास्त्री' बनाया था । पहले तो अमरेली आदि वल्लभाचार्य पीठों में ये अनेक आचार्यों एवं महन्तों के गुरु रहे । कामवन के पुष्टिमार्गीय गोस्वामी सुरेश बाबा को भी इन्होंने संस्कृत का विद्वान बनाया । फिर इन्होंने अहमदाबाद के पास पालडी में स्थित श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के कौशलेन्द्र मठ में वेदान्त के विभागाध्यक्ष बनकर वहां के गुणग्राहक महन्त और पीठाधीश का सम्मान प्राप्त किया । पीठाधीश ने इनसे यह अनुरोध किया कि संस्कृत में स्वामी श्रीरामानन्दजी का विशालकाय जीवनचरित्र लिखें जिसमें उनका (स्वामीजी रामानन्दजी का) जीवन भी आ जांय, दर्शन और सिद्धान्त भी तथा श्रीरामानन्द संप्रदाय का इतिहास भी । इस पर उन्होंने यह विशाल जीवनचरित्र लिखा जो ५९ परिच्छेदों में विभक्त विशाल गद्य काव्य है, कहीं-कहीं पद्य भी है अत: इसे चम्पूकाव्य भी कहा जा सकता है । इसमें श्रीरामानन्दजी के सिद्धान्त भी आ गये, जीवनवृत्त भी और सुललित तथा अलंकृत संस्कृत में उनका महत्त्व भी । बीच-बीच में पद्य होने के कारण इसे एक दो स्थानों पर स्वयम् इन्होंने चम्पूकाव्य भी कहा है । यह "आचार्यविजय" शीर्षक से सन् १९७७ में अयोध्या से प्रकाशित है और लेखक की प्रौढ़ किन्तु ललित लेखन शैली का प्रमाण देता है । गोस्वामी जी की गद्य रचना में जितनी पैठ थी उतनी ही पद्य रचना में भी थी । इन्होंने एक ही

आत्मा के पुनर्जन्मों की कथावस्तु लेकर "दिव्यालोक" नामक एक काव्य लिखा था जिसे १९७८ में राजस्थान संस्कृत अकादमी का "माघ" पुरस्कार भी मिला था । इन्हें गोस्वामी सभा ने गद्य पद्य सम्राट् की उपाधि दी थी तथा राजस्थान सरकार ने उन्हीं दिनों संस्कृत दिवस के अवसर पर विशिष्ट विद्वान् के रूप में इन्हें सम्मानित किया था जब यह योजना शुरू ही हुई थी । गोस्वामी जी २०वीं सदी के मध्य हुए ऐसे साहित्य सर्जक थे जिन्होंने अपने जीवन का अन्तिम चरण रात दिन साहित्य रचना में ही लगा दिया, न शरीर की परवाह की न परिवार की । इनकी रचना का वैविध्य और कौशल देखकर "संस्कृतप्रतिभा" नामक केन्द्रीय साहित्य अकादमी की संस्कृत पत्रिका के सम्पादक डॉ. राघवन् इतने प्रसन्न हुए कि उसके प्रत्येक अंक में इनकी गद्य या पद्य रचना छपे, इसके लिए इन्हें प्रेरित करते रहे । इसके फलस्वरूप इनकी अनेक रचनाएँ देश में प्रसिद्ध हो गई । इनकी विशेषता यह थी कि प्रत्येक वसंत ऋतु में ये वसंत के स्वागत में कविता, गद्य या नीति अवश्य लिखते थे । संस्कृतप्रतिभा में (अप्रैल १९६०) इनकी एक ऐसी रचना वसंत पर छपी है जिसमें मनमौजी कवि कभी गद्य और कभी पद्य में वसंत का स्वागत करता है । कवि निराला की शैली से पूरी तरह प्रभावित है । उनकी गीति का एक अंश देखते ही निराला की याद आ जाती है-

किंशुककदम्बकुंज गुंजितमधुपपुंज लोचनललामलोक-मनोहरवसन्त प्रियवर वसन्त

कवि ने वसन्त के समय होने वाले पतझड़ पर यह अनोखी कल्पना की है कि पल्लवराजि (हरियाली) अपने प्रिय पति शिशिर को जाते देखकर इतनी दु:खी हो गई है कि जमीन पर लौटती हुई रो रही है । ये गिरे हुए पत्तों का ढेर उसका लौटना ही तो है-

शिशिरं स्वकीयकान्तं यान्तं दृष्ट्वा विशीर्णहृदयेव योषित् सतीव दीर्घं पल्लवराजि: क्षितौ शेते ॥

भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था । प्राचीन कवियों की तरह ये ऐसे पद्य बहुत लिखते थे जिनके प्रथम अक्षरों से किसी का नाम बन जाय

या कोई वाक्य निकल आये । चित्तौड़ तथा अन्य स्थानों पर हुए संस्कृत सम्मेलनों में वे ऐसी प्रशस्तियां पद्यबद्ध कर सुनाया करते थे । इनके अधिकांश गद्य और पद्य के ग्रन्थ १९७०-१९७९ के बीच ही प्रकाशित हुए किन्तु १५-२० ग्रन्थ अप्रकाशित थे । उसी दौरान दिसम्बर, १९७९ में कैंसर से इनकी मृत्यु हो गई । इनके पुत्र बम्बई, भोपाल, जयपुर आदि नगरों में विभिन्न पदों पर प्रतिष्ठित हैं किन्तु शिवानन्द गोस्वामी से लेकर इन तक संस्कृत विद्वत्ता की जो परम्परा थी उसके आगे न चलने के कारण इनके अप्रकाशित ग्रन्थों का प्रकाशन हो पायेगा या नहीं, इसमें सन्देह है । कहते हैं, शिवानन्द गोस्वामी को त्रिपुरसुन्दरी का जो इष्ट था उसका प्रत्यक्ष चमत्कार अनेक राजाओं को इन्होंने दिखलाया था । उनके वंशजों में बीकानेर में निरन्तर तन्त्र साधक राजगुरु होते रहे । स्वयं गोस्वामी जी की तांत्रिक उपासना के भी अनेक चमत्कार यहां लोगों ने देखे थे । ६० साल की अवस्था में सभी विद्याओं में इतना विपुल लेखन अपने आप में एक चमत्कार ही तो था । इस कवि ने अपने वंश का इतिहास भी संस्कृत कविता में लिखा है जो ''वंशप्रशंस्ति' नाम से प्रकाशित है । न जाने ऐसे कितने साहित्यकारों की स्मृति काल की अनन्त गुफाओं में विलीन हो जायेगी यदि इतिहासकारों ने उन्हें सही ढंग से अभिलिखित कर अगली पीढ़ियों के लिए नहीं छोड़ा । यह परम हर्ष का विषय है कि इनके लिखे ''आचार्यविजय'' गद्य ग्रन्थ का यशः सौरभ ज्यों ही फैला, कुछ विद्वानों और श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के कुछ पीठाधीश्वरों ने इसके सानुवाद पुनः प्रकाशन की योजना बनाई । इसके फलस्वरूप यह ग्रन्थ नये रूप में प्रकाश में आएगा ऐसी आशा है ।

पं. गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्य सर्जक थे यह ऊपर के विवरण से स्पष्ट हो गया होगा । मैं स्वनाम धन्य युवा पुरुष स्व. कवि शिरोमणि भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण अपने मामा गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री के सान्निध्य में अनेक वर्षों तक रहा । इनकी कृतियाँ १९४५ से १९७९ तक विभिन्न संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही थीं इनके व्यक्तित्व

एवं कृतित्व पर डॉ. सरला शर्मा ने पी.एच.डी. के लिए शोध प्रबन्ध भी लिखा था जिस पर राजस्थान विश्वविद्यालय ने (संस्कृतविभाग) यह उपाधि प्रदान की थी । ऐसे विद्वान् अपने यशः शरीर से सदा अमर रहते हैं अतः सदियों तक उनकी कृतियों का समादर होता रहेगा यह सुनिश्चित है । उनकी स्मृति को शतशः प्रणाम अर्पित है ।

-देवर्षि कलानाथ शास्त्री

(राष्ट्रपति सम्मानित)

अध्यक्ष, आधुनिक संस्कृत पीठ, जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, प्रधान सम्पादक "भारती" संस्कृत मासिक भूतपूर्व अध्यक्ष, राजस्थान संस्कृत अकादमी तथा निर्देशक, संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार ।

सी-८ पृथ्वीराज रोड़, सी-स्कीम, जयपुर

प्रकाशकीय

"रामानन्द स्वयं राम: प्रादुर्भूतो महीतले" इस आर्षवचन के अनुसार स्वयं भगवान् राम ने जन-जन के उद्धार के लिए जगद्गुरु रामानन्दाचार्यजी के रूप में अवतरण किया था यह हम सब लोगों की मान्यता है । जगद्गुरु रामानन्दाचार्यजी ने ही वह भक्तिसरिता बहाई थी जिसमें ऊँच नीच का भेदभाव भूलकर सारी जनता श्रीरामभक्ति में अवगाहन कर पावन हो गई, एकजुट हो गई । भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी के जीवन पर जो अधिकृत संस्कृत ग्रन्थ लिखे गये हैं उनमें परम पूज्य स्वामी श्रीभगवदाचार्य जी का "श्रीरामानन्द दिग्विजय" महाकाव्य परिगणित किया जाता है जो बीसवीं सदी के प्रारम्भ में प्रकाशित हुआ था ।

बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में एक मूर्धन्य संस्कृत विद्वान्, समर्थ संस्कृत कवि, दर्शन विद्या में निष्णात ग्रन्थकार अपरा काशी जयपुर के रत्न गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री ने जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी का जो अधिकृत सुविशाल और प्रौढ़ जीवन चरित्र "आचार्य विजय" शीर्षक से लिखा उसमें ५९ सुविशाल परिच्छेदों में उनका सम्पूर्ण जीवनवृत्त भी समाहित है, उनके सिद्धान्त भी विवेचित हैं, उनके शास्त्रार्थों का और विजय यात्राओं का भी सुललित संस्कृत गद्य में वर्णन है । अनेक दशकों पूर्व यह ग्रन्थ अयोध्या से प्रकाशित हुआ था और अब अनुपलब्ध हो गया है । हमारा यह प्रयास है कि इसका पुनर्मुद्रण यथाशीघ्र हो जिससे यह पाठकों को पुन: उपलब्ध हो सके । इसकी सुललित प्रौढ़ और शास्त्रीय संस्कृत भाषा सामान्य पाठकों के लिए असुविधाजनक हो सकती है इस दृष्टि से इसका सरल हिन्दी अनुवाद भी साथ हो यह भी हमारी अभिलाषा थी ।

यह प्रसन्नता की बात है कि इस ग्रन्थ का सरल हिन्दी अनुवाद श्री हरिशंकरदास वेदान्ती ने कुछ वर्ष पूर्व ही करना प्रारम्भ कर दिया था। इसका बहुत सा अंश जयपुर के निकट स्थित त्रिवेणी धाम से निकलने वाली पत्रिका "ब्रह्मपीठ संदेश" में धारावाहिक रूप से छप रहा है। अब यह ग्रन्थ श्री पं. श्रीगयाप्रसादजी, श्रीहरिशंकरदासजी वेदान्ती तथा श्रीतुलसीदासजी नव्यन्यायाचार्य के हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित हो रहा है यह अत्यन्त सन्तोष का विषय है। इसमें पहले मूल संस्कृत पाठ प्रकाशित है, तदनन्तर उस अंश का अति स्पष्ट हिन्दी अनुवाद। इस क्रम से समस्त ५९ परिच्छेदों का यह अनुवाद इस ग्रन्थ को सर्वजन बोध गम्य बनाएगा और आचार्य चरण के जीवन और सिद्धान्तों को समाहित करने वाला यह ग्रन्थ समस्त देश में श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का संदेश फैलाएगा। इस अनूदित ग्रन्थ को मूर्तरूप देने का अथक प्रयास श्रीतुलसीदासजी ने किया है, महिनों जयपुर में रहकर इस ग्रन्थ का सम्पादन किया है अत: इस अनुवाद के लिए तुलसीदासजी विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

-डॉ. स्वामी राघवाचार्य वेदान्ती,

अग्रदेवपीठाधीश्वर, रेवासाधाम, सीकर, जयपुर

ो अनुवाद
दिया था ।
निकलने
है । अब
ती तथा
हो रहा
कृत पाठ
इस क्रम
ोध गम्य
त करने
ाएगा ।
सजी ने
है अतः

दान्ती,
जयपुर

सम्पादकीय

-देवर्षि कलानाथ शास्त्री

सगुण वैष्णव भक्ति की भागीरथी को सर्वजन-सुलभ बनाने वाले, दक्षिण के शास्त्रज्ञ आचार्यों द्वारा भगवान् बादरायण के ब्रह्मसूत्रों में दर्शनशास्त्रीय तत्त्वचिन्तन की खोज करने वाले विशिष्टाद्वैत, द्वैताद्वैत, द्वैत आदि के साम्प्रदायिक सिद्धान्तों के प्रवर्तक आचार्यों के मतभेदों की भूलभुलैया में पड़े हुए भक्तजनों को सीधे अपने आराध्य के चरणों तक पहुँचाने वाले भक्तिमार्ग को दिखाने वाले जगद्गुरु स्वामीरामानन्दाचार्य जी महाराज की महिमा आज विश्वविख्यात हैं । श्रीकबीरदासजी, श्रीरैदासजी, श्रीधन्नाजी, श्रीपीपाजी आदि कालजयी सन्तों के गुरु और मार्गदर्शक आचार्य स्वामी श्रीरामानन्दजी भक्तिमार्ग के चिन्तक और प्रतिपादक भी हैं किन्तु उनकी मुख्य भूमिका रही है समाज के साधारण से साधारण व्यक्ति तक भक्ति की संजीवनी पहुँचाना । केवल शास्त्रीय सिद्धान्तों तक सीमित हो रहे, सगुण भक्ति के आचारें को उन्होंनें एक समाजसेवी सन्त की तरह जन-जन तक पहुँचाया, यह उनका अद्‌भुत अवदान सात शताब्दियों से भाँति भाँति से स्मरण किया जाता रहा है ।

दक्षिण में आलवारों और नायनारों की प्रेमधारा को भक्ति सिद्धान्तों का रूप देने वाले चार प्रमुख आचार्य दक्षिण भारत के रहे, आचार्य रामानुज तमिलभाषी तमिलनाडु प्रान्त के, मध्वाचार्य कर्णाटक के, वल्लभाचार्य तेलुगु भाषी कम्भंपाटिके, निम्बार्काचार्य गोदावरीतीरस्थ मसिलीपट्टणम् के । अद्वैत वेदान्त के शिखर पुरुष शंकराचार्य तो केरल के थे ही ।

किन्तु भक्ति भागीरथी का शुचि शीतल संदेश उत्तर भारत में, उत्तर भारत की भाषाओं में फैलाने वाले पहले प्रमुख आचार्य चरणो का

प्रादुर्भाव अनेकानेक विद्वानों के अनुसार तीर्थराज प्रयाग में संवत् १३५६ तदनुसार सन् १३०० ई. में पुण्यसदनजी और श्रीसुशीला जी के घर में स्वामीश्रीरामानन्दजी के रुप में हुआ, जिन्होंने जातिपाँति का भेदभाव भुलाकर उत्तर भारत की जन भाषाओं में भक्ति चेतना फैलाई, हिन्दी में उपदेश दिए, आरती लिखी रामसेवक हनुमान की । लीला पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण को परब्रह्म मानने वाले आचार्यों से थोड़ा हटकर इन्होंने मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामजी को जन-जन के घर में बसने वाला आराध्य परम पुरुष बना दिया, उनकी पूजा के प्रकार सिखाए । निर्गुण सन्त कबीर को भी उन्होंने आशीर्वाद दिया, रैदास को भी, सगुण भक्ति के अनुयायियों को भी राम मन्त्र की दीक्षा देकर रामभक्ति की सरिता में स्नान कराया । इस प्रकार द्रविड़ में उपजी भक्ति को उत्तर भारत में स्वामी श्रीरामानन्दजी ने ला दिया ।

जगद्गुरु स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजी के प्रमुख द्वादश शिष्य सारे देश में फैल गए । नगर-नगर में रामभक्ति का सन्देश इन्होंने पहुँचाया । स्थान-स्थान पर रामद्वारे, राम मन्दिर या ऐसे मठ, तीर्थ स्थल या भक्ति केन्द्र स्थापित हुए जहाँ रामभक्ति की यह भागीरथी बहती रही । राजस्थान, गुजरात, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश आदि अनेक राज्य ऐसे हैं जहाँ गाँव-गाँव में इस सम्प्रदाय का कोई न कोई साधु-सन्त मिलेगा, कोई मन्दिर मिलेगा । जयपुर जैसे नगरों में तो श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के विशाल किले जैसे मन्दिर-मठ स्थापित हैं जहाँ शस्त्रधारी साधुओं की भी पलटन है (जैसे बालानन्द मन्दिर), ऐसे मन्दिर भी हैं जहाँ स्वामी अग्रदासजी जैसे सिद्ध सन्तों ने श्रीराम की मधुर उपासना की परम्परा चलाई, जहाँ श्रीसीतारामजी (युगल सरकार) की भावभीनी उपासना होती है ।

इतिहास की धारा को मोड़ देने वाले महापुरुष जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य का सन्देश जिस वेग से देश में फैला, उस वेग से उनके जीवन चरित्र की जानकारी नहीं फैल पाई । उनके शिष्य प्रशिष्यों ने जनभाषाओं में जो काव्यकृतियाँ लिखीं, उनमें उनकी चर्चा अवश्य आई, जैसे स्वामी अग्रदासजी के शिष्य नारायणदासजी (नाभाजी) की लिखी सुप्रसिद्ध भक्त-चरित- संग्रहकारिणी काव्यकृति

"भक्तमाल'' में जिसमें अनेक भक्तों का चरित्र वर्णित है । स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजी के समग्र जीवन चरित पर भी काव्य ग्रन्थ लिखा जाए यह अपेक्षा सिद्ध सारस्वत सन्तों को सदा से रही । उन्नीसवीं सदी के अन्त में (१८७१ ई.) जन्मे सुविदित मनीषी और सम्प्रदाय के पीठाधीश जगद्गुरु श्रीभगवदाचार्य स्वामी जी ने जब देखा कि जगद्गुरु शङ्कराचार्य पर शङ्करदिग्विजय जैसे अनेक काव्य लिखे गये हैं तो उन्होंने श्रीरामानन्ददिग्विजय महाकाव्य बीस सर्गों में लिखकर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य के जीवन पर संस्कृत काव्यबद्ध सर्जना प्रस्तुत की जिसे स्वयं हिन्दी अनुवाद के साथ छपाया ।

गुजरात में पालडी स्थित श्रीरामानन्दपीठ के स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्य जी ने इसी अपेक्षा को दृष्टिगत रखते हुए संस्कृत में रामानन्दाचार्यचरित छपाया जो प्रकाशित हो चुका है । इस प्रकार संस्कृत में रामानन्दाचार्य के जीवनवृत्त लेखन की परम्परा पनपी है । हिन्दी में उन पर उपन्यासात्मक जीवनवृत्त लिखने की परम्परा भी पनपी । हृषीकेश के महामण्डेलश्वर अभिरामदास और काशी के पंचगंगा पीठ के स्वामी रामनरेशाचार्य जी की प्रेरणा से श्रीरामानन्द जी के जीवन पर कुछ उपन्यास भी हिन्दी में लिखे गये जिनमें अमिता शाह का काशी मार्तण्ड और इन्द्रा स्वप्न का शंखनाद उल्लेखनीय है । राजस्थान के विख्यात कवि और साहित्यकार श्रीदयाकृष्ण विजय ने 'पायसपायी'' शीर्षक सुरुचिर उपन्यास स्वामीरामानन्दजी की जीवनी पर लिखा है जिसका अंग्रेजी और संस्कृत में अनुवाद भी हो चुका है । संस्कृत में जगद्गुरु रामानन्दाचार्य का जीवन चरित्र, उनका संदेश, उनका दर्शन, उनकी विजय यात्रा आदि का एक साथ समूचा निबन्धन करने वाला ग्रन्थ सदियों से अपेक्षित था । इस अपेक्षा की पूर्ति उपर्युक्त उपन्यासों से कई दशाब्दियों पूर्व गोस्वामी पं. हरिकृष्ण शास्त्री ने कर दी थी । श्रीहरिकृष्ण गोस्वामी जयपुर की विद्वन्माला के एक अप्रतिम रत्न थे उपर्युक्त सभी ग्रन्थों और उपन्यासों से अनेक दशकों पूर्व "आचार्यविजय'' नामक विशाल संस्कृत गद्यकाव्य लिखकर दी थी ।

जगद्‌गुरु आचार्य रामानन्दजी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर सर्वाङ्गीण प्रकाश डालने वाला, वैदुष्यपूर्ण और सुललित संस्कृत ग्रन्थ है गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री की ''आचार्य विजय'' शीर्षक कालजयी कृति जिसमें न केवल उनका समूचा जीवन चरित्र उत्कृष्ट संस्कृत गद्य में निबद्ध है अपितु उनके दार्शनिक सिद्धान्त, उनके द्वारा प्रतिपादित भक्ति का स्वरूप, उनके वक्तव्यों और मान्यताओं की सुनियोजित प्रस्तुति तथा उनके शिष्यों, उपदेश यात्राओं, शास्त्रार्थों आदि का अधिकृत विवरण भी इसमें समाहित है । ५९ परिच्छेदों में विभाजित इस जीवनचरित्र और सिद्धान्त विवेचक ग्रन्थ ने वे सारी अपेक्षाएँ पूरी कर दीं जो एक सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य के अमर चरित्र को अभिलिखित करने के सन्दर्भ में संजोई जाती हैं ।

गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे । वे न केवल विविध शास्त्रों में निष्णात थे, बल्कि निगम और आगम की विभिन्न शाखाओं के अध्ययन के साथ-साथ उन्होंने शाक्त, पाञ्चरात्र, वैष्णव आदि विविध सम्प्रदायों की साधना पद्धतियों का भी व्यावहारिक सुदीर्घ अनुभव प्राप्त किया था । यह उनकी अनतिसाधारण विशेषता थी । वे पैदा तो उस वंश में हुए थे जो देशविख्यात तंत्रशास्त्रियों का वंश था । रीवां, दतिया, बीकानेर आदि राजाओं को शाक्त तंत्र की दीक्षा देने वाले महामनीषी गोस्वामी शिवानन्द के वंश के वे रत्न थे । गोस्वामी शिवानन्द जयपुर के संस्थापक सवाई जयसिंह के पिता विष्णुसिंह को शाक्त दीक्षा देकर उनके गुरु के रूप में समादृत ऐसे राजपंडित और राजगुरु थे जिन्हें आमेर राज्य की ओर से पाँच गाँवों की जागीर दी गई थी । उस जागीर में ही जयपुर के निकट स्थित वह ग्राम 'महापुरा' भी है जहाँ आज शिवानन्दपुरी बसी हुई है, एक स्नातक संस्कृत महाविद्यालय है जिसका शुभारम्भ शिवानन्द पाठशाला के रूप में स्वयं गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री ने स्वतन्त्रता से पूर्व किया था । इस परम्परा के कारण हरिकृष्ण गोस्वामी शाक्त तन्त्र में भी निष्णात थे ।

जैसा आप गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री जी की जीवनी पढ़ने से पाएँगे, वे राजस्थान के राजकीय संस्कृत कालेजों में प्राध्यापक, आचार्य आदि रहे थे । इसके साथ ही उन्हें उनके वैदुष्य के कारण वल्लभवंशज पुष्टिमार्गीय वैष्णव सम्प्रदाय के आचार्यों ने भी सम्मान दिया जिसके फलस्वरूप वे मुम्बई, अमरेली आदि के वल्लभ वंशज आचार्यों के प्रतिष्ठानों में आस्थान-पंडित के रूप में रहे । इस दौरान उन्होंने पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों का अध्ययन-अध्यापन भी किया, लेखन भी । उनके इस वैदुष्य को देखकर उन्हें पहले जयपुर के श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के कुछ प्रतिष्ठानों ने सम्मानित किया, फिर अहमदाबाद के निकट पालडी स्थित रामानन्द प्रतिष्ठान में रहकर उन्होंने साम्प्रदायिक साहित्य पर तथा रामानन्दीय विशिष्टाद्वैत दर्शन पर साहित्य रचना की ।

यहीं से उन्हें स्वामी रामानन्दाचार्य की विस्तृत जीवनी और सिद्धान्त विवेचन समाहित करने वाला ग्रन्थ लिखने की प्रेरणा हुई । "आचार्यविजय" ग्रन्थ का लेखन उन्होंने यहीं से प्रारम्भ किया । १९६८ से लेकर १९७५ ई. तक ७-८ वर्षों की निरन्तर साधना के फलस्वरूप उन्होंने यह ग्रन्थ पूरा किया । अनेक कारणों से इसका प्रकाशन गुजरात से नहीं हो पाया । श्रीअयोध्याजी स्थित रामानन्द पीठ में भी वे कुछ वर्ष रहे जहाँ उन्होंने इस ग्रन्थ को अन्तिम रूप दिया । वहाँ से भी इसका प्रकाशन किसी प्रतिष्ठान की ओर से नहीं हुआ अपितु स्वयं लेखक ने अनेक श्रद्धालुओं की आर्थिक सहायता से सन् १९७५ में श्रीअयोध्याजी से इस ग्रन्थ का प्रकाशन स्वयं किया । इतने उत्कृष्ट, मूर्धन्य आधार ग्रन्थ के प्रकाशन की यह स्थिति उन दिनों हम सभी साहित्य सेवियों की पीड़ा का कारण रही । श्रीसरस्वतीजी के अनेक उपासकों की ऐसी स्थिति होती हमने देखी ही है ।

किन्तु "न रत्नमन्विष्यति, मृग्यते हि तत्" उक्ति के अनुसार स्वयं लेखक का यह प्रकाशन भी भारत भर में सुविदित हो गया । दुर्भाग्य से १९७९ ई. में लेखक का निधन हो गया अतः इस ग्रन्थ का समुचित प्रसार नहीं हो पाया । दो दशकों के बाद जब स्वामी रामानन्दाचार्य की सप्त शताब्दी के आयोजन चल रहे थे, इस ग्रन्थ की महिमा पुनः विद्वानों के

सम्मुख आई । तब से इसकी व्याख्या के, हिन्दी अनुवाद आदि के प्रयास भी हुए । कुछ विद्वानों ने इसका पद्यबद्ध हिन्दी अनुवाद करना चाहा, कुछ ने इसके शास्त्रीय विषयों पर दार्शनिक व्याख्या लिखनी चाही । रेवासा धाम स्थित अग्रदेव पीठ के आचार्य डॉ. राघवाचार्य वेदान्ती जी ने इस ग्रन्थ की प्रतियाँ अनेक विद्वानों को समर्पित कर इसके अनुवाद, सम्पादन, प्रकाशन आदि की प्रेरणा उन्हें दी ।

इसके फलस्वरूप जयपुर स्थित सियारामदासजी बगीची के समर्पित साहित्यसेवी श्रीहरिशंकर दास वेदान्तीजी ने इसका सरल हिन्दी अनुवाद प्रारम्भ किया । वह त्रिवेणीधाम के आचार्य ब्रह्मपीठाधीश श्रीनारायणदासजी के मासिक मुख पत्र "ब्रह्मपीठ सन्देश" में धारावाहिक रूप से छपने भी लगा । रेवासा धाम स्थित अग्रपीठ के आचार्य डॉ. राघवाचार्य जी की प्रेरणा से पण्डित श्रीगयाप्रसाद शास्त्री ने पूर्वार्द्ध का अनुवाद किया तथा श्रीतुलसीदासजी नव्यन्यायाचार्यजी ने उत्तरार्द्ध का अनुवाद किया इस प्रकार श्रीहरिशंकरदासजी वेदान्ती, पं. गयाप्रसादजी शास्त्री एवं श्रीतुलसीदासजी नव्यन्यायाचार्य इन महापुरुषों के सत्प्रयास से हिन्दी अनुवाद के सहित इसका प्रकाशन अब परम सन्तोष एवं आह्लाद का विषय है । इस प्रकाशन के उपलक्ष्य में हम सब रेवासाधामस्थित अग्रपीठाधीश विद्वत्प्रवर डॉ. राघवाचार्य- वेदान्तीजी के प्रति सप्रणति शतशः कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं तथा प्रभु जानकीनाथ से प्रार्थना करते हैं कि इस ग्रन्थ का प्रसार विश्वजनीन हो तथा यह जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी का सन्देश विश्व में फैलाएं, साथ ही अपने लेखक का यश भी ।

अध्यक्ष, आधुनिक संस्कृत पीठ जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
तथा प्रधान सम्पादक "भारती" संस्कृत मासिक, राष्ट्रपति सम्मानित, पूर्व अध्यक्ष, राजस्थान संस्कृत अकादमी तथा निर्देशक संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार ।

श्रीगणेशाय नमः॥ श्रीजानकीवल्लभो विजयते॥श्रीमते रामानन्दाय नमः॥

श्रीआचार्यविजय "कथासार"

प्रस्तुति- तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य,

श्रीगोरेदाऊजी आश्रम, परिक्रमा मार्ग, वृन्दावन

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥
सीतानाथसमारम्भां रामानन्दार्य मध्यमाम् ।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ।
वाञ्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च ।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः ॥

श्रीहरिगुरु वैष्णव भगवान् की महती कृपा से यथाधीतं यथामति न्यायानुसार "**आचार्य विजय**" ग्रन्थ का सारांश प्रस्तुत किया जाता है ।

श्रीतीर्थराज प्रयाग में श्रीपुण्यसदन नाम के एक विप्र निवास करते थे । उनकी धर्मपत्नी का नाम सुशीला था दोनों भगवान् की आराधना करते हुए स्वजीवन यापन करते थे । यद्यपि उस समय मुसलमानों का आतंक अपनी चरम सीमा पर था, तथापि तीर्थराज प्रयाग में इनके तपः प्रभाव से उनका आतंक प्रभावी नहीं था प्रयागवासी स्वच्छन्दतापूर्वक धर्मानुष्ठान करते थे । लगभग पचहत्तर साल तक की आयु व्यतीत होने पर भी जब किसी पुत्र रत्न की प्राप्ति नहीं हुई तब दोनों ने अनुष्ठानपूर्वक साकेताधीश भगवान् श्रीसीतारामजी की समाराधना शुरू की । उनकी कठिन तपस्या के फलस्वरूप भगवान् श्रीसीतारामजी उनके समक्ष प्रकट हुए । दोनों ने निर्निमेष नेत्रों से ठाकुर जी का दर्शन किया, जब दर्शन जन्य आह्लाद से किंकर्तव्य विमूढ़ से हो गये तब स्वयं भगवान् ने कहा मैं आप दोनों के ऊपर परम प्रसन्न हूँ आप दोनों का मनोरथपूर्ण करूँगा । हे देवि ! सुशीले ! मैं आपका पुत्र बनकर

आपकी गोद को समलंकृत करूँगा । हे महात्मन् ! श्रीपुण्यसदन ! मैं आपके पूर्वजन्म की घटना याद कराने के लिए ही प्रकट हुआ हूँ आप पूर्वजन्म में "मनसुख" नाम के हमारे सखा थे उस समय आपकी अवस्था लगभग छः साल की थी आपके[१] माता-पिता को यवनों ने यवन धर्म स्वीकार न करने के कारण मार दिया था । यवनों[२] के आतंक से भयभीत आप घर छोड़कर वन में भाग गये थे और वन-वन में भटकते रहे, भूख और प्यास से व्याकुल होने पर आपके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ और मेरे दर्शन की तीव्र उत्कण्ठा हुई । फिर यथोपलब्ध वन्य पदार्थों का सेवन करते हुए आपने कठोर तपोऽनुष्ठान किया[३] । आपके भक्तिभाव से प्रसन्न होकर आपके समक्ष मैं बालक रूप में अवतीर्ण होकर आपके साथ बालक्रीड़ा करने लगा । कुछ दिनों के बाद जब मैं आपको छोड़कर जाने लगा तब आपने मुझको भी अपने साथ ले चलिए ऐसी प्रार्थना की तब मैंने आपको आश्वासन दिया कि आप चिन्ता मत करिए, दूसरे जन्म में मैं आपका पुत्र बनकर अवतीर्ण होऊँगा और स्वकीय बालक्रीड़ा से आपको प्रसन्न करूँगा, इतना कहकर मैं अन्तर्हित हो गया, वही मैं आज आपके समक्ष प्रकट हुआ हूँ । मैं आपके भवन को समलंकृत करने के लिए शीघ्र ही चारुशीला श्री सुशीला देवी के गर्भगत होकर प्रकट होऊँगा और आपके मानसिक सन्ताप को दूर करूँगा । अधर्म का नाश कर के पुनः सनातन धर्म की स्थापना करूँगा । अतः आप दोनों जाकर सानन्द अपने भवन में निवास कीजिए, बहुत जल्दी ही आप दोनों को पुनः मेरा दर्शन प्राप्त होगा ऐसा कहकर भगवान् तिरोहित हो गये ।

कालान्तर में भगवान् श्रीपुण्यसदन जी के तेज के माध्यम से श्रीसुशीला जी के उदर में प्रविष्ट हुए । तत्पश्चात् से श्रीसुशीला जी की अङ्गकान्ति उत्तरोत्तर बढ़ने लगी । नव मास के बाद एक दिन श्रीसुशीला जी

---

१. **तासु मातु पितु यवनन मारे । भे न यवन यासों हनि डारे ॥**

"श्रीरामानन्दाचार्य चरितामृत"

२. **सो लखि यवनन अत्याचारा । भाजि गयो वन शोक अपारा ॥**

अवतारकाण्ड

३. **करन लग्यो अति घोर तप वन बसि गंगा पार ।**
निरख्यो चाहत नैन भरि दशरथ राजकुमार ॥

ने ब्राह्म मुहूर्त में एक स्वप्न देखा कि कोई अपूर्व परम तेजस्वी परम मनोहर शिशु अपने भवन प्राङ्गण में खेल रहा है, सर्वाभरणभूषिता देवाङ्गनाएँ उस दिव्य शिशु का लाड प्यार कर रही है । कोई उसे ऊपर उछाल रही हैं फिर हाथों से पकड़कर बार-बार मुख चुम्बन कर रही हैं फिर कुछ देवाङ्गनाएँ सुगन्धित द्रव्यों से उस शिशु को स्नान कराकर उसे दिव्य रत्न जटित सिंहासन पर पधराकर उसके विशाल भाल में तिलक लगाकर विविध उपचारों से उसका पूजन कर रही हैं दिव्य शिशु के मनोविनोद के लिए साक्षाद् देवाधिदेव भगवान् शंकर स्वडमरुनिनादपूर्वक ताण्डव नृत्य कर रहे हैं इन्द्रादिदेवगण नन्दनोद्यान के पुष्पों की वृष्टि करते हुए स्तुति कर रहे हैं । तत्क्षण ही वह बालक तरुण होकर यज्ञोपवीत, दण्ड, कमण्डलु, मेखलाजिन आदि धारण करके दिव्यशिष्य मण्डली से घिरे हुए समुन्नत पीठ पर विराजमान होकर दिव्य उपदेश एवं श्रीराम भक्ति का प्रचार प्रसार कर रहा है श्रीसुशीला जी भी उपदेशामृतपान में निमग्न हो रही है स्वयं जननी आगे जाकर उस दिव्य शिशु के समीप पहुँचने का जैसे ही प्रयास किया वैसे ही प्रभातकाल की मंगलभेरी ध्वनि सुनायी पड़ी, अचानक जग गयी स्वप्न का दृश्य गायब हो गया ।

जब श्रीपुण्यसदन जी सन्ध्यावन्दनादि नित्यकर्म से निवृत्त होकर अपने उपासना गृह से बाहर निकले, उसी समय स्व स्व शाखानुसार पदक्रमजटाघन पाठ करते हुए परम तेजस्वी चार ब्राह्मणों को देखा । क्या ये सनक सनन्दन सनातन सनत्कुमार हैं ? नहि नहि ये सनकादि ऋषि नही हो सकते क्योंकि वे तो हमेशा पाँच वर्ष की अवस्था में ही रहते हैं वे तो दिगम्बर वेष में रहते हैं ये तो वस्त्र धारण किये तरुण हैं इस प्रकार वितर्क हुए जब उनके समीप पहुँचे तब वे ब्राह्मण स्वस्तिवाचन करते हुए आशीर्वाद देते हुए श्री पुण्यसदन जी की जय जयकार करने लगे श्रीपुण्यसदन जी ने उन सबको उचित आसन पर बैठाकर उनका विधिवत् पूजन किया परिचय जानने की इच्छा होने पर ''हम ज्योतिर्विद् हैं'' आपकी उज्ज्वल कीर्ति को सुनकर आपको भविष्य की बात बताने हेतु ही हम यहाँ उपस्थित हुए हैं साञ्जलि श्री पुण्यसदन जी ने निवेदन किया कि सेवक सुनने के लिए सावकाश तैयार बैठा है आप सब कृपा करें । स्वस्ति कहते हुए उन्होंने

कहना प्रारम्भ किया-हे महानुभाव ! आप यथा नाम तथा गुण के अनुसार पुण्य धाम होते हुए गुण गण गरिष्ठ भी हैं जिसके लिए आपने तप किया है, उस तप से सन्तुष्ट होकर भगवान् स्वयं प्रादुर्भूत होकर आपके पुत्र बनेंगे । वह आपका पुत्र श्री कर्दमनन्दन श्रीकपिल भगवान् के समान सर्वविध अज्ञान रूपी कर्दम के प्रक्षालन में परम प्रवीण होते हुए ''जगद्गुरु पद'' पर आसीन होकर स्व प्रभा और प्रतिभा के समुद्रेक के द्वारा वैदिक धर्म विरोधी पाखण्ड प्रचारकों का दमन करते हुए आर्य संस्कृति का समुद्धारक होगा । महाशय ! आपसे भी द्विगुणित महिमा एवं सौभाग्य सम्पन्ना आपकी धर्मपत्नी श्रीसुशीलाजी हैं परब्रह्म भगवान् नित्य श्रीसाकेताधिपति जगदभिराम श्रीरामजी अतिशीघ्र ही इनके पुत्र रूप में प्रकट होने वाले हैं आप दोनों के अक्षयकीर्ति का विस्तार करने वाले हैं ऐसा कहकर पुनः वैदिक मन्त्रों का पाठ करने लगे । श्रीपुण्यसदनजी ने ब्राह्मणों को प्रणाम किया और उनकी पूजा हेतु तत्स्वरूपानुरूप वस्त्र द्रव्यादि लेने जैसे ही घर के भीतर प्रविष्ट हुए वैसे ही वे ब्राह्मण अन्तर्हित हो गये, लौटकर जब उन विप्रों को नहीं देखा तब आश्चर्यचकित हो गये उनके अदर्शन से व्याकुल होकर भूमि पर गिर पड़े, उसी समय आकाशवाणी हुई । ''हे महात्मन् ! आप शोक न करें श्रीसुशीलाजी के गर्भगत बालक की स्तुति करने के लिए ही हम चारों वेद ब्राह्मण के रूप में आपके यहाँ आये थे इति'' आकाशवाणी श्रवण कर जैसे ही श्रीपुण्यसदन जी स्वस्थचित्त हुए वैसे ही तत्क्षण श्री सुशीलाजी आकर उनके चरणों में वन्दन करती हैं फिर श्रीपुण्यसदन जी ने वेदों के आगमन की कथा को सुनाया और श्रीसुशीला ने स्वप्न शिशु की कथा सुनायी मिथः श्रवणकर बड़े प्रसन्न हुए । श्रीसुशीला जी ने कहा भगवन् ! अब अतिशीघ्र ही हमारे यहाँ पुत्र रत्न प्रकट होने वाले हैं अतः भगवान् श्री राम की प्रसन्नता हेतु राजोपचार विधि से ''श्रीरामार्चा-महोत्सव'' का अनुष्ठान कराया जाय तदङ्गत्वेन साधु ब्राह्मणों के विशाल भण्डारे का अयोजन कराया जाय । श्रीपुण्यसदनजी ने राजोपचार विधि से श्रीरामार्चामहायज्ञ के द्वारा भगवान् श्रीराम का यजन किया और साधु सन्तों की समाराधना की ।

आज विक्रम संवत्[१] १३५६ तदनु सन् १३०० की माघ कृष्णा सप्तमी है प्रकृति ने अपने सर्वसद्गुण सम्पन्न स्वरूप को प्रकट कर दिया है सर्वत्र पृथिवी पर मंगल ही मंगल दीख रहा है मानो पृथिवी अपने प्रियतम की अगवानी के लिए अपने मंगलरूपी पुत्र को गोद में लेकर सतत सनद्ध है दिशाएँ प्रसन्न है नदियों में निर्मल जल प्रवाहित हो रहा है शीतल मन्द सुगन्ध वायु बह रही है प्रातः काल की मंगलमयी वेला है सूर्य की अरुणिमा से पूर्व दिशा की अपूर्व छवि प्रकट हो रही है । आकाश में बादल मन्द-मन्द गरज रहे हैं योग, लग्न, ग्रह और वार एवं तिथि सब शुभ एवं अनुकूल है[२] सूर्य

---

१. स्वामी जी के अवतार काल के विषय में अनेक मान्यताएँ अपने सम्प्रदाय में चल रही है । काशी मार्तण्ड एवं श्रीरामानन्द दिग्विजय तथा आचार्य विजय के अनुसार विक्रम संवत् १३५६ अर्थात् सन् १३०० में स्वामी जी का प्राकट्य हुआ था । श्रीरामानन्दचरितामृत तथा श्रीगोवत्सजी द्वारा विरचित वैष्णव कबीर के अनुसार विक्रम संवत् १२५६ अर्थात् सन् १२०० है श्रीगोवत्सजी का कहना है कि सन्त ज्ञानेश्वर के पिता स्वामी जी के शिष्य थे यह बात तभी युक्तिसंगत होगी जब उनका अवतार काल १२५६ संवत् माना जाय ।

खं नभो वेद वेद प्रमिते वर्षगते कलौ ।
माघकृष्णस्य सप्तम्यां शुभधर्म प्रवर्तकः ॥
सप्तदण्डोद्गतेसूर्ये सिद्धयोगयुजि प्रभुः ।
नक्षत्रे त्वष्ट दैवत्ये कुम्भलग्ने शुभग्रहे ॥
एवं सर्वगुणोपेते देशे काले च माधवः ।
गुण्ये पुण्ये शरण्यः स शरणागतवत्सलः ॥
आविर्भूतो महायोगी द्वितीय इव भास्करः ।
रामानन्द इति ख्यातो लोकोद्धरण कारणः ॥

अगस्त संहिता के इस वचन के अनुसार कलियुग के ४४०० वर्ष बीत जाने पर स्वामी जी का अवतार हुआ था । सन् २००१ में तीर्थराज प्रयाग के महाकुम्भ पर्व में बड़ी धूमधाम से स्वामीजी का सप्त शताब्दी महोत्सव मनाया गया था । इन प्रमाणों से स्वामीजी का प्राकट्य काल संवत् १३५६ ही उचित प्रतीत होता है । वर्तमान में कलि का ५१११ वर्ष बीत चुका है अतः ५१११ में से ४४०० वर्ष घटाने से ७११ वर्ष सिद्ध होता है ।

२. **रवौ धनस्थे च शनौ तुलास्थे चन्द्रे तथा कोणगते बुधे च ।**
केन्द्रे गुरौ दैत्य गुरौ च राहौ मेषस्थिते भूमिसुते तथैव ॥
कुम्भे च लग्नेऽथ च सिद्धयोगे रवावुदिते किल सप्त दण्डे ।
त्वाष्ट्रे च ऋक्षे जगतामधीशः सुशीलयासावि सुखेन सूनुः ॥

-रामानन्द दिग्विजय सर्ग ३-३५-३६

धनराशि में है शनि और चन्द्र तुला राशि में स्थित है बुध कोण में है, गुरु और शुक्र केन्द्र में है, राहु और मंगल मेष राशि में है तथा कुम्भ लग्न और चित्रा नक्षत्र में जब सूर्य सात दण्ड तक उदित हो चुके थे उसी शुभ घड़ी में श्रीसुशीला मैया के यहाँ भगवान् श्रीराम पुनः बालक रूप में प्रकट हो गये, स्वामी रामानन्दाचार्य भगवान् के प्रकट काल में स्वर्ग में दुन्दुभियाँ बिना बजाये ही बज उठी, पुष्पों की पुष्कल वृष्टि होने लगी आज तीर्थराज प्रयाग साठ हजार तीर्थों से समन्वित होकर श्री गंगा यमुना और श्री सरस्वती के कलकल निनाद से अतीव शोभायमान हो रहे हैं चर एवं अचर सभी प्रसन्न हैं श्रीसुशीलाजी ने अपने समक्ष प्रकट श्रीरघुनाथजी को देखकर प्रणति निवेदन करने के लिए जैसे ही हस्त व्यापार किया वैसे ही श्रीरामजी सामान्य शिशुरूप होकर रुदन करने लगे, दासी ने जाकर श्रीपुण्यसदनजी को यह शुभ समाचार सुनाया । कर्णप्रिय समाचार सुनकर श्रीपुण्यसदन जी ने अतिप्रसन्न होकर अपने गले से नवलखा हार उतार कर दासी को दे दिया । त्रिकालज्ञ महर्षि कल्प ज्योतिर्विद् ब्राह्मण एवं वैदिक ब्राह्मण आ आकर शुभाशीर्वचन एवं वैदिक मन्त्रों से बालक की रक्षा का विधान करते हैं सम्पूर्ण प्रयागवासी नर और नारी अपने-अपने हाथों में नाना भेंट की सामग्री लेकर श्रीपुण्यसदन और सुशीला के महल में उपस्थित होकर बधाई दे रहे हैं मंगल गीत गा रहे हैं प्रजातीर्थ की शुभ घड़ी में श्रीपुण्यसदनजी भी दिल खोलकर दान कर रहे हैं **'जाचक सकल अजाचक कीन्हें'** इस उक्ति को श्रीपुण्यसदनजी ने पूर्णरूप से चरितार्थ कर दिया प्रतिदिन नये-नये महोत्सव हो रहे हैं इस प्रकार १२ दिन व्यतीत हो गये पुत्र का जात कर्म संस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ 'एकादशेऽहनि पिता नाम कुर्यात्' सिद्धान्त के अनुसार श्रीपुण्यसदनजी ने विशिष्ट ज्योतिर्विदों को बुलाया और उनका आदर सत्कार करने के बाद अपने पुत्र को उनके समक्ष रख दिया ब्राह्मणों ने जब स्वामी रामानन्द जी का दर्शन किया तब भाव विभोर हो गये कुछ समय पश्चात् बोले पण्डितजी ! आपका यह बालक सुभग सद्गुणों से विशिष्ट एवं श्रीवशिष्ठ जैसा महाज्ञानविज्ञानराशि होगा साक्षात् कपिल भगवान् जैसा सम्पूर्ण माया ग्रन्थिका भेदन एवं सर्व संशय

का छेदन करने वाला होगा ।* सम्पूर्ण जीवों को सुगमता से ज्ञान ज्योति प्रदानकर अज्ञानान्धकार का हरण करेगा यह बालक निखिल विश्व में सम्मान्य वदान्य और सर्व प्राणिमात्र के लिए अपूर्व-आनन्द एवं सौख्य को बढ़ाने वाला होगा, लोक में 'श्रीरामानन्द' नाम से प्रसिद्ध होगा । श्रीपुण्यसदनजी ! आपका यह बालक आपके वंश और आपकी विमल कीर्ति का विस्तारक होगा ।[२] श्रीपुण्यसदनजी अपने बालक की भविष्यवाणी सुनकर बड़े प्रसन्न हुए ।[३] ब्राह्मणों को विपुल दक्षिणा देकर विदा किया । श्रीरामानन्दजी शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की तरह उत्तरोत्तर अभिवृद्धि को प्राप्त हो रहे हैं ।

जब श्रीरामानन्द जी लगभग तीन वर्ष के हो गये तब श्रीसुशीला जी के आंगन में बालक्रीड़ा करने लगे । प्रभु की बालक्रीड़ा देखने

---

* भाद्रपद शुक्ल पक्ष की ऋषि पञ्चमी को अन्न प्राशन का उत्सव मनाया गया विविध व्यञ्जन बालक के समक्ष सुवर्ण की थाल में परोसा गया बालक ने अंगुलि से खीर की ओर इशारा किया माताजी ने बालक के मुख में खीर पवाया और भी नमकीन व्यञ्जन पवाने लगी तो बालक ने मुँह घुमा लिया केवल खीर पाये तभी से श्रीरामानन्दजी का केवल खीर आहार हो गया ।

एक दिन श्रीपुण्यसदनजी भगवान् पूजन भजन कर रहे थे धीरे से श्रीरामानन्दजी पूजागृह में पहुँच गये और दक्षिणावर्त शंख हाथ से उठाकर मुख से फूँक कर बजाने लगे- ध्वनि सुनकर पिताजी ने नेत्र खोला तो अपने पुत्र को शंख बजाते देखा पिताजी बड़े दु:खी हुए और बालक के हाथ से शंख छिन लिया यह शंख पूजन के लिए है बजाने के लिए नहीं । रात्रि में जब पुण्य सदनजी ने शयन किया तब भगवान् ''वेणीमाधवजी'' ने स्वप्न दिया हे ब्राह्मण देव ! इस बालक को मेरा ही स्वरूप समझो और शंख इस बालक को ही दे दो सवेरे श्रीपुण्यसदनजी ने शंख को श्रीरामानन्द जी को प्रदान कर दिया अब श्रीरामानन्द जी दिन में चार बार (प्रात: मध्याह्न, सन्ध्या, शयनकाल) शंख बजाते सुनकर प्रयाग निवासी गदगद हो जाते ।

२ **खीर ओर शिशु अँगुरि उठाई । माता पायस तनिक पवाई ॥**

३ **तादिन सों यह वन्यो अहारा । एक मात्र पायस आधारा ॥**

श्रीकाकभुसुण्डिजी प्रकट हो गये श्रीरामानन्दजी दोनों हाथ में मोदक लेकर अजिर में विचरण कर रहे हैं कुछ खा रहे हैं कुछ बिखेर रहे हैं श्रीकाक भुसुण्डि जी आंगन में गिरे मोदक कणों को उठाकर खा रहे हैं और नृत्य कर रहे हैं श्रीरामानन्द जी भी काक भुसुण्डि को कभी मोदक दिखाकर भाग जाते हैं तो कभी उन्हें पकड़ने दौड़ते हैं । उसी बीच एकान्त देखकर एक वानर भी आ गया और आंगन में गिरे हुए मोदक कणों को चुन चुनकर खाने लगा । श्रीरामानन्दजी भी उसकी पूँछ पकड़कर आँगन में चारों तरफ घुमा रहे हैं खींच रहे हैं और उनके साथ विविध क्रीड़ा कर रहे हैं स्वामी जी की यह क्रीड़ा देखकर कभी-कभी सुशीला बहुत भयभीत हो जाती है भगवान् राम से अपने बालक की रक्षा हेतु प्रार्थना करती है ।

एक दिन श्रीरामानन्द जी पलंग पर शयन कर रहे थे दाहिने पैर का अँगूठा अपने मुख में डालकर चूस रहे थे उसी समय एक पड़ोसिन आयी और बोली भगवन् ! आप साक्षान्नारायण हैं आप सामान्य बालक की तरह क्यों चेष्टाकर रहे हैं आज हमारे हिन्दू समाज की बड़ी दयनीय दशा है दुष्ट दुराचारी मौज कर रहे हैं सन्त सज्जन और सती महिलाएँ सतायी जा रही हैं यवन संस्कृति उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है अतः आप शीघ्र ही तरुण होकर दुष्ट दानवों का उन्मूलन करें आर्य संस्कृति की पुनः प्रतिष्ठा करें इति ।

जब श्रीरामानन्दजी पाँच[1] वर्ष के हो गये तब वसन्त पञ्चमी के दिन उनका सविधि यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हुआ । तदनन्तर अपनी माता से विद्याध्ययन हेतु अनुमति एवम् आशीर्वाद प्राप्त करके पिता के साथ[2] पैदल

---

१. श्लोक- **षष्ठे चवत्सरे प्राप्ते पुण्यसद्माद्द्विजोत्तमः ।**
तं विहितान्य संस्कारमुपनेतुं व्यचारयत् ॥

-श्रीरामानन्द दिग्विजय सर्ग ६.१३

चौपाई- **आठ वर्ष बीते यही भांति ।**
मातु उपनयन हेतु ललाती ॥ -(रामानन्दचरितामृत)

श्लोक- **ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे ।**
राज्ञो बलर्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे ॥

२. उक्ति- **'न वाहनान्युप युञ्ज्याद् ब्रह्मचारी''**

ही[१] काशी के लिए प्रस्थान किया । रास्ते में गङ्गाजी के तट के समीप एक सुरम्य स्थल में रात्रि निवास किया, जहाँ पहले ऋषिकल्प सदाचार सद्विचारपरायण हिन्दू प्रजा निवास करती थी यवनों के आतङ्क से पीड़ित होकर वे लोग उस स्थान को छोड़कर यत्र तत्र अरण्य में यथोपलब्ध वन्य पदार्थों का सेवन करते हुए येन केन प्रकारेण स्वजीवनयापन करने लगे । वेष बदल कर प्रच्छन्नरूप से जब वे लोग आज वन्य पदार्थों के अन्वेषण हेतु अपने-अपने आवास से निकले तब उन्होंने पिता के साथ श्रीरामानन्दजी को देखा । दिव्य तेजः समन्वित श्रीरामानन्द जी को देखकर उनको साक्षाद् भगवान् श्रीराम मानकर विविध उपायन सामग्री लेकर प्रणतिपूर्वक उनके समक्ष प्रकट हुए । श्रीरामानन्दजी ने उनके आतिथ्य को स्वीकार किया और बोले-

बन्धुओं ! वास्तव में आप सब ही हिन्दू धर्म के सजग प्रहरी हैं सिंह व्याघ्र भयाकुल इस निर्जन वन में दुष्ट दुश्शासक के दुःशासन कुचक्रचक्र में पड़कर नानाविध क्लेशों को सहन करते हुए भी आप सब निर्भीक हैं आप सब जिस भूमि भाग में रहते हैं वह धन्य है वह प्रदेश पुण्यतम है आप सभी का दर्शन करके हम सब भी धन्य हो गये । सम्प्रति भारत का दुर्भाग्य ही है कि शस्त्रों के बल पर म्लेच्छाधम नीच लोग राज्य कर रहे हैं दुष्ट दुराचारियों के आतङ्क से पीड़ित धर्मप्राण जनता त्राहि त्राहि कर रही है लेकिन चिन्ता की कोई बात नहीं है भगवान् अकारण करुणा वरुणालय है अतिशीघ्र ही धर्म प्राण प्रजा का करुण क्रन्दन सुनेंगे और दुष्टदुर्विनीतों का निकन्दन करेंगे एतदर्थ हम लोगों का परम कर्त्तव्य है कि धर्म के परिपालन, सद्धर्म के प्रचार एवम् अधर्म के उपशमन के लिए भारत

---

१. सुना जाता है कि पण्डितजी ने उपनयन विधि के अनुसार पलाश दण्ड धारण कराकर काशी पढ़ने भेजा जब कुछ दूर चले गये तब मामाजी लौटाने आये और बोले बेटा ! लौट चलो श्रीरामानन्द जी ने कहा कि हम तो अब काशी ही जायेंगे, पण्डितजी दौड़े आये बेटा । यह तो एक रीति है वह पूरी हो गयी चलो अब लौट चलो तब- **बोले कुँवर सुनो सब भाई । झूँठी रीति न मोहिं सुहाई ॥ विद्या पढ़ि हौं काशी जाई । सुनि सबके मुख गये सुखाई ॥**

में भारतीय संस्कृति के समुद्धारार्थ प्रतिदिन मिलकर विशुद्ध अन्त:करण से एकाग्रचित होकर भगवान् से प्रार्थना करें । पञ्चवर्षीय बालक श्रीरामानन्दजी का मधुर प्रवचन सुनकर सबके सब स्तब्ध हो गये और उनको भगवदंश[१] स्वरूप मानकर उनकी सुरक्षा में रात भर जगते रहे ।

दूसरे दिन नित्य कर्म सम्पन्न करके ब्रह्मचारी श्रीरामानन्द अपने पितृचरण के साथ प्रस्थान करते हैं सायंकाल होने पर किसी नदी के किनारे सुन्दर सुपास देखकर रूक गये । वहीं एक स्थान में सुमधुर पेयजल से परिपूरित कुआँ था । जहाँ जल लेने के बहाने हजारों युवतियाँ आया करती थी उन युवतियों ने जब ब्रह्मचारी रामानन्दजी का दिव्य स्वरूप देखा तो देखते ही अपना सर्वस्व उनके चरणों में समर्पित कर दिया । किसी तरह घर आकर उन सबने नवागन्तुक के समागमन एवं उनके दिव्यतेज और सौन्दर्य का गान किया । बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू । अवसि देखिहहिं देखन जोगू ।। के अनुसार गाँव के सभी बड़े बुढ़े नर नारी उपायन सामग्री लेकर दर्शनार्थ पहुँचे और प्रणाम निवेदित करते हुए बैठ गये । ब्रह्मचारी रामानन्दने यथायोग्य सबका आदर किया और कहा-बन्धुओं ! अधुना मैं अपने पिताजी के साथ श्रीकाशीपुरी जा रहा हूँ वहीं किसी गुरुकूल में रहकर विद्याध्ययन करूँगा । मार्ग में ही प्रेमप्रकर्ष प्रपूरित श्रद्धालुओं की सुनने की उत्कंठा को देखकर हमारे मन में भी सुभग समुपदेश प्रसारण की शुभेच्छा होती है किन्तु पहली बात इस समय भारतीयों की स्वस्व धर्माचरण विरोधिनी प्रवृत्ति और मनोवृत्ति को देखकर तथा अपने पूर्वजों के दिव्य सदाचार विवेक विज्ञान से परिपूर्ण जीवन को याद करके मेरा मन खिन्न हो रहा है दूसरी बात इस समय मैं बालक हूँ अभी हमारी बुद्धि का पूर्णरूपेण विकास भी नहीं हुआ है इस समय कहाँ क्या हो रहा है इसका सम्यक् बोध भी नहीं है इतना अवश्य कहता हूँ कि जिस धर्म प्राण प्रजा को लेकर जिनके बल विज्ञानादि के सहयोग से समस्त देश या राष्ट्र का पूर्ण अस्तित्व सुरक्षित है और जो हमारे देश की प्रकृति है जो सर्वदा सकल मानव संस्कृति परम्परा की रक्षा करती है

---

[१] **बाल्यात्प्रभृति स ज्ञानी रामनामपरायण: ।**
पिता मात्रा यदा त्यक्तो राघवं शरणं गत: ।।

-भविष्यपुराण ३.२.३२

जिसकी उन्नति ही समस्त देश की उन्नति है । उसी प्रजा और प्रकृति के लिए यदि कोई शासक कण्टक बनता है शूल बनता है उनके हितों को यदि पैर से कुचल देता है कृतघ्नता करता है तो वह शासक बहुत जल्दी ही विनष्ट हो जाता है । हिरण्यकशिपु, रावण, कंस, दुर्योधनादि इस बात के अनेक उदाहरण है जिन्होंने अखिल विश्व को जीत कर एक छत्र साम्राज्य स्थापित कर दिया था मृत्यु को भी जीत कर गरज रहे थे किन्तु ''राजा प्रकृतिरञ्जनात्'' को न मानने के कारण दुःखी दीन हीन प्रजाजनों के अन्तः सन्ताप और शाप से उत्पन्न क्रोधाग्नि में जलकर खाक हो गये[1] नाम मात्र शेष रह गया । राजा राम ने अपनी प्रजा की प्रसन्नता के लिए परम विशुद्ध जानकी का भी त्याग कर दिया था आज वही प्रजा सतायी जा रही है कर के बहाने उनका शोषण हो रहा है सर्वस्व लूटा जा रहा है । यह भारत वर्ष भारतीयों की अत्यन्त पावन मातृ भूमि है इसमें तो सर्वात्मना भारतीयों का ही अधिकार है हम भारतीयों का ही भारत के ऊपर जन्मसिद्ध अधिकार है यह तो दुर्भाग्य है कि कोई अनार्य वैदेशिक म्लेच्छ भारत का स्वामी बन बैठा है । अस्तु, जो हुआ सो हुआ अब हम लोगों को निष्क्रिय और अकर्मण्य नहीं बैठना चाहिए अब्र हाथ पर हाथ धर कर बैठने का समय नहीं है हम लोगों के शरीर में भी वही रक्त है जो भीम और अर्जुन में था अपने पूर्वजों के गौरव गाथा को सतत ध्यान में रखकर स्वधर्मपालनपूर्वक स्वजीवनयापन करना चाहिए । ब्रह्मचारी रामानन्दजी के वचनामृत पान कर तत्रत्य जनता गदगद हो गयी और भारत माता की जय हो इत्यादि जय ध्वनियों से वह क्षेत्र गूँज उठा । उसी गाँव में मुसलमानों का एक काजी रहता था उसने जब जयघोष सुना तो चौक गया सबको एकत्रित देखकर क्रोध से लाल हो उठा कुछ मुस्लिम सैनिकों को साथ लेकर आया और श्रीरामानन्दजी से बोला क्यों रे बालक ! तू कौन हैं कहाँ से आया ? वैदेशिक सत्ता के विरुद्ध जनता को क्यों भड़का रहा है ? बादशाह के उग्रदण्ड को नहीं जानता है ? तू अभी बालक है अगर कुछ दिन जीना चाहता है तो राजद्रोह मत कर, नहीं तो

१

भूमौ ममत्वं कृत्वान्ते हित्वेमां निधनं गताः ।
कालेन ते कृताः सर्वे कथामात्राः कथासु च ॥

–भागवत १२.२.४०.४४

अभी तुम्हें यमलोक पहुँचा देंगे । काजी की बात सुनकर श्रीरामानन्दजी ने कहा-महाशय ! यदि किसी के घर को डाकू लूट रहे हों तो वह अपने घर को बचाने के लिए यदि कोई प्रयास करता है तो वह राजद्रोह है क्या ? क्या वह दण्ड भागी होगा ? काजी ने कहा नहीं, अच्छा बताइए यदि कोई विदेशी आपके घर में आकर आपकी कृपा से कुछ दिन जीवन यापन करे और बाद में आपके घर को अपने अधीन करले स्वयं मालिक बन बैठे तो उस समय आपका क्या कर्तव्य होगा ? काजी ने कहा कि उसे लाठी दण्डे से पीटकर कर उसका कान पकड़कर कुहनी मारकर उसे घर से बाहर निकाल देंगे यदि वह आपसे सबल हो और साधिकार पैर जमाकर बैठ गया हो ? तो अपने बन्धु बान्धवों का सहयोग लेंगे और अपने पड़ोसियों से सहयोग लेकर येन केन प्रकारेण उसे घर से बाहर निकाल कर ही दम लेंगे । अच्छा बताएँ यदि कोई वैदेशिकी सत्ता आकर आपके देश पर आक्रमण करके आपके देश को अपने हस्तगत करके स्वयं स्वामी बन ज़ाय तो उस समय क्या आप करेंगे काजी ने कहा उसे राजसत्ता से हटाने का प्रयास करेंगे येन केन प्रकारेण साम दाम दण्ड और भेदादि नीतियों से अथवा उससे युद्ध करके प्राण की बाजी लगा करके भी अपने देश को स्वाधीन करने का प्रयास करेंगे जब तक अपना देश अपने अधीन नही हो जाता तब तक शान्ति से नही बैठेंगे । मुस्कराते हुए श्रीरामानन्दजी ने कहा कि आपका भी वह प्रयास राजद्रोह है कि नहीं ? काजी ने कहा कि इसमें राजद्रोह क्या है ? अपने देश को अपने अधीन करने का प्रयास तो होना ही चाहिए अगर इसको कोई राजद्रोह कहता है तो सर्वथा अनुचित है । श्रीरामानन्दजी ने कहा बहुत अच्छा । आपके मुख से ही निर्णय हो गया कि हम राजद्रोही नहीं है यह भारतवर्ष हमारा है दुर्दैववशात् विदेशियों के हाथ में चला गया है अब यदि हम सब उसके विषय में कुछ विचार विमर्श कर रहे हैं तो क्या यह राजद्रोह है ? काजी ने कहा क्यों रे ! तू तो केवल देखने में छोटा सा बालक लगता है वाक्चातुरी में बड़े-बड़े वृद्ध भी तुम्हारे सामने नतमस्तक है हमारे द्वारा दिये गये उत्तर को हमारे ही सिर पर पटक दिया । सावधान ! यदि तुम लोग कुछ दिन और जीना चाहते हो तो अतिशीघ्र भाग जाओ नहीं तो हमारे सैनिक तुम्हें मार डालेंगे । ब्रह्मचारी श्रीरामानन्दजी ने कहा असम्भव । हम ब्रह्मचारी है रात्रि में कहीं अन्यत्र नहीं जा सकते । काजी ने कहा तो

ामानन्दजी ने
ह अपने घर
है क्या ?
ए यदि कोई
यापन करे
बन बैठे तो
लाठी दण्डे
र से बाहर
र बैठ गया
ड़ोसियों से
दम लेंगे ।
र आक्रमण
ाय तो उस
यास करेंगे
उससे युद्ध
करने का
तक शान्ति
ा भी वह
क्या है ?
हिए अगर
ी ने कहा
ी नहीं है
ा है अब
क्या यह
छोटा सा
स्तक है
वधान !
ओ नहीं
सम्भव ।
कहा तो

उपदेश बन्द करो मौनी होकर रह सकते हो ब्रह्मचारी रामानन्द ने कहा असम्भव । यह सुनकर काजी के सैनिक तलवार लेकर टूट पड़े जैसे ही ब्रह्मचारी रामानन्द के समीप पहुँचे उनके दुर्धर्ष तेज से हतप्रभ होकर गिर पड़े चिल्लाने लगे अरे बचाओ अब मरे, अब जले, ओ अल्लाह ! तोबा ! तोबा ! बचाओ बचाओ जब वे सब काजी के साथ ब्रह्मचारी रामानन्द के चरणों में नतमस्तक हुए तब शान्त हो गये स्वस्थ हो गये । ब्रह्मचारी रामानन्द के इस प्रकार प्रभाव को देखकर सभी विस्मित हो गये ।

श्रीपुण्यसदनजी अपने पुत्र के बुद्धि कौशल प्रतिभा एवं इस घटना को बार बार यादकर के भूयो भूयः श्रीरामानन्दजी का मुखमण्डल देख रहे हैं ब्रह्मचारी रामानन्द ने अपने पिता की मनः स्थिति को समझकर अचानक पूछा- पिताजी ! सुना है कि विद्या का फल अमृत एवं विनम्रता है स्वकर्तव्य बोध है फिर जान बूझकर के भी विद्वान लोग भगवद् विमुख होकर सांसारिक मृगतृष्णा का अनुसरण क्यों करते हैं ? अन्धों की भाँति अज्ञान गर्त में क्यों गिर जाते हैं श्रीपुण्यसदनजी ने कहा वत्स ! इसमें विद्या का कोई दोष नहीं है विद्या तो अपना फल उपस्थित करती ही है अधिकारी और पात्र के अनुसार विद्या का फल उचित और अनुचित प्रतीत होता है जैसे गाय का दूध पौष्टिकादि अनेक गुणों से विशिष्ट है लेकिन यदि वह दूध आम्लादि गुण दूषित पात्र में डाल दिया जाय तो वह दूध फट जायेगा सारा गुण विपरीत हो जायेगा । इसी प्रकार विद्या, धन और शक्ति के बारे में समझना चाहिए । इस समय सभी लोग[१] अधिकार-अनधिकार पात्र, अपात्र का विचार छोड़कर सभी विद्या में सभी का अधिकार मानकर सब लोग सब कुछ पढ़ने व करने को तैयार हैं यही कारण है कि विद्या का विपरीत फल दिखायी दे रहा है इस प्रकार से सत्सङ्गवार्तापूर्वक यात्रा करते हुए काशी के समीप पहुँचते-पहुँचते सन्ध्याकाल हो गया विश्राम हेतु किसी सुरम्य स्थान का चयन किया । उसके समीप में स्वच्छ सुमधुर जलाशय था एक विशाल वट का वृक्ष था सन्ध्यावन्दनादि नित्यकर्म सम्पन्न करके पिता पुत्र दोनों बैठे थे अचानक एक विशालकायप्रेत भयंकर गर्जना करते हुए वट वृक्ष से नीचे उतरा । ब्रह्मचारी

---

१. **साक्षरा विपरीताश्चेद् राक्षसाएव केवलम् ।**
सरसो विपरीतोऽपि सरसत्वं न मुञ्चति ॥

रामानन्द ने तुम्हें ऐसी योनि की प्राप्ति कैसे हुई ऐसा पूछा ? प्रेत ब्रह्मचारी रामानन्द को प्रणाम करके कहा महाराज ! यह सब मेरे अभिमान और दुराचार का ही फल है इसके पहले मैं जाति का शुद्र था सन्त और सद्गुरु की कृपा से थोड़ी सी विद्या प्राप्त हो गयी अब तो मैं अपने को विद्वान् और महामहापण्डित मानने लगा फलतः सन्तों और विद्वानों का अपमान और उपेक्षा करने लगा । एक दिन विचरण करता हुआ मैं इसी स्थान पर आया यहाँ एक त्रिकालज्ञ सिद्ध महात्मा निवास करते थे उन्होंने मुझे सन्त विद्वान् समझकर अपने समीप ही सुन्दर आवास की व्यवस्था कर दी । अब मैं उनके समक्ष ही सन्तों व विद्वानों की निन्दा-आलोचना करना शुरू किया- सुनकर सन्त बड़े दु:खी हुए उन्होंने मुझे समझाकर कहा भगवन् ! यह संसार एक समुद्र है जैसे समुद्र में अनेक प्रकार के रत्न, सीपी आदि होते हैं कोई ज्यादा चमकदार होता है कोई फीका होता है वैसे ही इस संसार में नाना प्रकार के लोग हैं सबमें सब गुण नहीं होते हैं किसी में कोई गुण होता है तो किसी में कोई ।[1] इस संसार में भगवान् को छोड़कर सर्वविद् कोई नहीं है और अत्यन्त मूर्ख भी कोई नहीं है जो जितना जानता है वह उतने में विद्वान् है जगत् में कोई गुणवान् है उसमें भी कोई न कोई अवगुण मिलेगा ही । कोई गुणहीन है उसमें भी कोई न कोई सद्गुण तो रहता ही है अतः हंस की तरह सन्तों को गुणग्राही होना चाहिए । जब सन्त की अमृतमयीवाणी को सुनकर स्वभावतः दुष्ट होने के कारण मैंने उनका और उनके प्रवचन का उपहास किया तब उन्होंने प्रेत होन का शाप दे दिया विशेष प्रार्थना करने पर उन्होंने कहा- कलियुग में भगवान्[2] श्रीराम जब श्रीरामानन्द जी के रूप में अवतीर्ण होकर विद्याध्ययनार्थ काशी जाते समय यहाँ आयेंगे तब उनके दर्शन व चरणस्पर्श से तेरा उद्धार होगा तब से आज तक मैं यहीं रहकर आपकी

---

१. **न सर्ववित् कश्चिदिहास्ति लोके नात्यन्तमूर्खो भुवि चापि कश्चिद् ।**
ज्ञानेन नीचोत्तममध्यमेन यो यद्विजानाति स तेन विद्वान् ॥
-विष्णुपुराण

२. **माघे कृष्णे च सप्तम्यां चित्रानक्षत्र संयुते ।**
कुम्भलग्ने सिद्धि योगे सुसप्त दण्डगे खौ ।
रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले -(वैश्वानर संहिता)

प्रतीक्षा कर रहा था आज आपके दर्शन से मेरा उद्धार हो गया । ऐसा कहकर वह प्रेत योनि से मुक्त हो गया इस दृश्य को देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ । इस प्रकार यात्रा करते हुए श्रीपुण्यसदनजी भागीरथी नदी के तट काशी में पहुँचे । पञ्चगङ्गा घाट पर विराजमान "श्रीवैष्णवमठ" में पहुँचकर दोनों ने स्वामी श्रीराघवानन्दाचार्यजी को प्रणाम किया । दूसरे दिन नित्यनियम सम्पन्न होने के पश्चात् श्रीपुण्यसदन जी ब्रह्मचारी रामानन्द को लेकर स्वामी राघवानन्दाचार्यजी के चरणों में प्रस्तुत हुए और साञ्जलि निवेदन किया आचार्य चरण ! मेरा यह बालक आपश्री के चरणों में रहकर विद्याध्ययन करना चाहता है आज से यह बालक आपका ही है । हे अकारणकारुणीक । इस बालक के माता-पिता और गुरु सब आप ही हैं अतः आप इस बालक को यथारूचि शिक्षा दें । स्वामीजी ने एक बार ब्रह्मचारी रामानन्द जी के ऊपर दृष्टिपात किया और समझ गये कि यह बालक भविष्य में महान् आदर्श पुरुष होगा सम्पूर्ण भारत में भक्तिमार्ग परम्परा का प्रचार प्रसार करेगा अतः यह बालक सर्वथा स्थापनीय एवं संरक्षणीय है सपदि उसके आवासादि की व्यवस्था करके श्रीपुण्यसदनजी से बोले महोदय ! आप वस्तुतः पुण्यसदन है क्योंकि ऐसा होनहार पुत्ररत्न आपको प्राप्त हुआ है यह बालक आपके कुल के गौरव को बढायेगा ऐसे सुयोग्य शिष्य को पाकर हम भी गौरवान्वित होंगे । श्रीपुण्यसदनजी बड़े प्रसन्न हुए और अपने पुत्र को आचार्य चरण के समक्ष बुलाकर कहा वत्स रामानन्द! आज से तुम्हारे माता-पिता पूज्य गुरुदेव हैं गुरुदेव की आज्ञा का पालन करता हुआ मनसा वाचा और कर्मणा पूज्यचरण की सेवा करना । प्रमाद से रहित होकर गुरुदेव की आज्ञापालन करना । गुरुदेव के चरणाराधन में ही अपना कल्याण और सुख समझना । अपने से बड़ों का समादर और छोटों के प्रति स्नेह का भाव रखना । श्रीपुण्यसदनजी अपने पुत्र को आचार्य श्री के चरणों में समर्पित करके अपने घर चले आये ।

ब्रह्मचारी रामानन्द ने आचार्य श्री की कृपा से स्वल्पकाल[१] में ही व्याकरण, न्याय, मीमांसा, काव्य, कोष, पुराण, ज्योतिष्, वेद और उपनिषदों का सम्यक् अध्ययन कर लिया, प्रसङ्गानुसार लौकिक और अलौकिक

---

१. गुरु गृह गये पढ़न रघुराई । अल्पकाल सब विद्या आई ।।

विद्याओं और कलाओं के भी ज्ञाता हो गये । क्रमशः आस्तिक एवं नास्तिक दर्शनों में भी निष्णात हो गये । जहाँ कहीं भी शास्त्रार्थ गोष्ठी अथवा विद्वत्सभा होती सर्वत्र उत्साहपूर्वक भाग लेते और विजयी होते, इस प्रकार काशी में सर्वत्र उनकी चर्चा होने लगी ।

एक बार काशी में विद्वानों की एक संगोष्ठी हुई विषय रखा गया सांख्यशास्त्र और ईश्वर । सांख्य शास्त्र के पारङ्गत विद्वान् ने पूर्वपक्ष की स्थापना किया सार यह था प्रकृति और पुरुष के संयोग से ही जब सृष्टि हो सकती है तो ईश्वर की क्या आवश्यकता है ? ब्रह्मचारी रामानन्द ने स्वामी ज़ी की कृपा से युक्तिपूर्वक[१] सभी दर्शनों में ईश्वर को किसी न किसी रूप में स्वीकार किया गया है यह सिद्ध किया । ब्रह्मचारी रामानन्द के शास्त्रार्थ कौशल ने सबको वशीभूत कर दिया काशी के हर कोने में उनके वैदुष्य और वाग्मिता की चर्चा होने लगी ।

पुनः दूसरी जगह शास्त्रार्थ का कार्यक्रम रखा गया श्रीमान् "सर्वदर्शन" नामक विद्वान ने कहा बन्धुओं ! कल आपने ब्रह्मचारी रामानन्द का वैदुष्यपूर्ण भाषण श्रवण किया लेकिन सांख्य शास्त्र में स्पष्ट रूप से ईश्वर को अस्वीकार किया है- "ईश्वरासिद्धेः" यदि आप हठात् ईश्वर की सिद्धि करते हैं तो बताइए 'ईश्वरासिद्धेः' सूत्र का क्या अर्थ है ? ब्रह्मचारी रामानन्द सहसा बोल उठे भगवन् ! केवल शब्दोच्चारण मात्र देखकर कुछ भी निर्णय नहीं किया जा सकता । निर्णय से पहले पूर्वापर का सम्बन्ध भी देखना होगा कि- किस प्रसङ्ग में, किस प्रकरण में, किस परिस्थिति में कहाँ और कैसे शब्द का प्रयोग किया गया है । ईश्वरासिद्धेः का तात्पर्य यह है कि- यद्यपि परमात्मा सब जगह व्यापक है, सर्वरूप है, सर्वकर्ता है तथापि लौकिक इन्द्रियों से उसकी सिद्धि नहीं हो सकती 'यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः' के अनुसार वे जिसके इन्द्रियों के विषय बनना चाहें तो उसे उनका प्रत्यक्ष भी हो सकता है ईश्वरासिद्धेः का अर्थ यदि सर्वथा ईश्वराभाव मानेंगे तो- स हि सर्ववित् सर्वकर्ता ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा सां. सू. ३.५६.५६ इन सूत्रों का क्या होगा ? इसके बाद श्रीसर्वदर्शन जी ने[२] ईश्वर के साकार और निराकार

---

[१]. विशेष द्रष्टव्य पञ्चदश परिच्छेद

[२]. ईश्वर विषयक विशेष जानकारी के लिए देखें परिच्छेद १६

स्वरूप के बारे में चर्चा की है । ब्रह्मचारी रामानन्द ने श्री सर्वदर्शन जी के सभी प्रश्नों का समुचित उत्तर दिया । सम्पूर्ण काशी में सर्वत्र ब्रह्मचारी रामानन्द के वैदुष्य व वाक्पटुता की चर्चा होने लगी । कुछ लोग काशी की यात्रा करके तीर्थराज प्रयाग आये और श्रीपुण्यसदनजी के भाग्य की भूरी भूरी प्रशंसा करते हुए ब्रह्मचारी रामानन्द के वैदुष्य की बहुत प्रशंसा की । सुनकर श्रीपुण्यसदन और सुशीला दोनों बड़े प्रसन्न हुए और अपने पुत्र के दर्शन की इच्छा से काशी चले आये ।

इधर स्वामी श्रीराघवानन्दाचार्य जी के चरणों में रहकर विद्याध्ययन करते हुए ब्रह्मचारी रामानन्द के जीवन के १२ वर्ष व्यतीत हो गये । एक दिन स्वामी जी ने ब्रह्मचारी रामानन्द से कहा वत्स रामानन्द ! अब तुम्हारी शिक्षा दीक्षा सम्पन्न हो गयी तुम सर्वथा योग्य हो गये हो समावर्तन संस्कार का समय हो चुका है अत: तुम अब अपने माता-पिता के पास जाओ और अपने सुचरित्र और सद्विचार से उन्हें प्रसन्न करो । स्वामीजी के श्रीमुख की वाणी सुनकर ब्रह्मचारी रामानन्द स्तब्ध और हृदय शून्य हो गये कुछ बोले नहीं नेत्रों से अजस्त्र-अश्रु प्रवाहित होने लगे स्वामी जी ने गृहस्थ धर्म की प्रशंसा करते हुए पुन: ब्रह्मचारी रामानन्द को समझाया लेकिन ब्रह्मचारी रामानन्द जी का संकल्प अडिग रहा, रोते हुए ब्रह्मचारी रामानन्द ने कहा प्रभो ! मैं आपके श्रीचरणों को छोड़कर कहीं भी एक क्षण भी नहीं रह सकता आप मुझे अपने श्रीचरणों से अलग मत कीजिए ऐसा कहकर ब्रह्मचारी रामानन्द स्वामी जी का चरण पकड़कर रोने लगे । स्वामीजी ने ब्रह्मचारी रामानन्द को उठाकर हृदय से लगा लिया उसी समय श्रीपुण्यसदन और सुशीला जी स्वामी जी के चरणों में उपस्थित हुए । कुशलक्षेम के अनन्तर स्वामीजी पुन: ब्रह्मचारी रामानन्द को उपदेश देने लगे ब्रह्मचारी रामानन्द माता-पिता के समक्ष भी अपने दृढ़ संकल्प पर अडिग रहे ब्रह्मचारी रामानन्द के दृढ़ प्रतिज्ञा को देखकर माता-पिता ने प्रसन्नतापूर्वक अनुमोदन कर दिया । शुभ मुहूर्त में स्वामी राघवानन्दाचार्यजी ने ब्रह्मचारी रामानन्द का पञ्च संस्कार किया वैष्णवी दीक्षा प्रदान किया तप्तमुद्रा=धनुष बाण का छाप, ऊर्ध्वपुण्ड्रतिलक, नाम-दासान्त अथवा आचार्यान्त, मन्त्र, माला-कण्ठी ये पाँच संस्कार है ।

"**तस्य किं नाम काठिन्यं गुरुणा योऽनुकम्पितः**" इस सिद्धान्त के अनुसार आचार्य वरेण्य स्वामी राघवानन्दाचार्य जी के सान्निध्य में श्रीरामानन्दाचार्य ने यम नियमादि सर्वाङ्ग योग में सिद्धि प्राप्त कर लिया । इस प्रकार स्वामी रामानन्दाचार्य सभी दृष्टि से सर्वात्मना सुयोग्य हो गये । एक बार स्वामीजी ने लोगों से सुना कि काशी में भी कौल मत का दुष्प्रचार-प्रसार हो रहा है कौल मत का वास्तविक स्वरूप क्या है ? इसका सम्यग् बोध कराने के उद्देश्य से उनके आश्रम के पूजा गृह में सशिष्य प्रवेश कर गये जहाँ तत्सम्प्रदायदीक्षित का ही प्रवेश होता है कौलमतावलम्बियों का स्वामी दुर्जनानन्द ने कहा ऐ संन्यासिन् ! बिना आज्ञा और हमारे सम्प्रदाय में दीक्षा लिये बिना यहाँ कैसे चले आये ? यह हमारे पूजा का समय है अत: जल्दी ही यहाँ से चला जा । स्वामी रामानन्द ने कहा महाशय ! यह कौनसी उपासना है ? यहाँ तो मद्य मांस कामिनी व्यभिचारादि सम्पन्न हो रहा है यह कौन सा पूजा का प्रकार है ? सुनकर दुर्जनानन्द ने कहा ए मुण्डिन् ! तुम मुझे नहीं जानते हो मैं कौलाचार्य महान् तान्त्रिक सिद्धशिरोमणि दुर्जनानन्द हूँ तू मेरा तान्त्रिक प्रभाव नहीं जानता है इसलिए बकवास कर रहा है अगर कुछ दिन और जीना चाहता है तो भाग जा यहाँ से अन्यथा क्रोधाग्नि में जलकर भस्म हो जायेगा । स्वामीजी ने कहा महोदय ! यह शरीर तो अन्त में भस्म होगा ही तो अभी होने से क्या हानि है आप कृपया अपना सिद्धान्त बताएँ आपका कैसा मार्ग है स्वामी जी की बात सुनकर दुर्जनानन्द ने कहा श्रीमान् ! हम लोग वाममार्गीय है कौलमत हमारा है हम शक्ति की उपासना करते हैं मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन इस पञ्चमकारोपासना से जीव को सहज में मुक्ति की प्राप्ति होती है सुनकर स्वामी बड़े खिन्न हुए और उसको धिक्कारते हुए कहा महानुभाव ! सीधी सादी भारतीय जनता को भटका रहे हो, मद्य मांसादि पञ्चमकारों[१] का यह अर्थ नहीं है जो तुम कर रहे हो, उसका तात्पर्य कुछ और ही है निर्विकल्प परब्रह्म निरञ्जन और निर्विकार में जो प्रकृष्ट ज्ञान है वही मद्य है शराब नहीं । योगिजनों का अपनी जिह्वा को जिह्वा के मूल में ले जाकर सहस्त्रार कमल से विगलित अमृतबिन्दु को पानकर मत्त होना ही मद्यपान करना है एवम् मांस शब्द का तात्पर्य सम्पूर्ण

---

१. पञ्चमकारों का विशेष अर्थ परिच्छेद २१ में देखें ।

कर्म और कर्म फलों को परमात्मा को समर्पित करना । अथवा मा का अर्थ रसना और स का अर्थ वाणी अर्थात् जिह्वा और वाणी का भक्षण=नियन्त्रण करना ही मांस भक्षण है । एवम् मीन=मत्स्य का तात्पर्य=शरीर के भीतर जो इङा और पिङ्गला नाड़ी है वही गंगा यमुना है उनके मध्य जो श्वास प्रश्वास की गति होती है श्वास प्रश्वास ही चञ्चल होने से मत्स्यहै इनको प्राणायामादि के द्वारा रोककर सुषम्ना के द्वारा प्राणवायु को चलाना ही मत्स्य भक्षण है अथवा मत्स्यवत् चञ्चल इन्द्रियों को वश में करके आत्मा में विलीन करना ही मत्स्य भक्षण है । मुद्रा=असत्सङ्ग का परित्याग ही मुद्रा है मैथुन=सुषुम्ना नाम की शक्ति स्त्री स्वरूप है और प्राणस्वरूप शिव पुरुष है उनका परस्पर सङ्गम ही मिथुनीभाव है मैथुन है इस प्रकार स्वामी रामानन्द जी के द्वारा स्वमत का खण्डन देखकर दुर्जनानन्द आग बबुला हो गया और बोला अरे पण्डितम्मन्य ! मैं केवल तुम्हारे गुरुजी के कारण ही मौन हूँ नहीं तो अभी तुम्हें स्वमतखण्डन का प्रतिफल दिखा देता और अपने भक्तों से पूछा बताओ अपने की धर्म की निन्दा करने वाले को क्या दण्ड दिया जाय ? उसके भक्त स्वामी जी के प्रवचन से पूर्णरूपेण प्रभावित थे अत: भक्त सब मौन हो गये । भक्तों की ऐसी स्थिति देखकर दुर्जनानन्द बड़ा लज्जित हुआ तब उसका एक शिष्य बोल पड़ा धर्मावतार गुरुदेव ! ऐसे व्यक्ति को तो तत्काल मार डालना चाहिए नहीं तो यह बहुत बड़ा घातक होगा । शिष्य के कहने पर दुर्जनानन्द तलवार लेकर दौड़ा तो उसी के शिष्यों ने उसका विरोध कर दिया । दुर्जनानन्द तलवार रख दिया । दुर्जनानन्द के भक्त सब स्वामी जी के चरणों में प्रस्तुत हुए भगवन् ! अब हम लोगों की आंखें खुल गयी हैं अब आप कृपा करके हम लोगों का उद्धार करें ।

स्वामी रामानन्द तो अपने आश्रम चले आये परन्तु दुर्जनानन्द के हृदय में द्वेषाग्नि भड़क उठी, अवसर की प्रतीक्षा में था एक दिन स्वामी जी समाधि लगाकर बैठे थे दुर्जनानन्द आ गया मारने का बहुत प्रयास किया परन्तु सफलता नहीं मिली, एक विषधर सर्प को उठाकर स्वामीजी के गले में डाल दिया उसका भी असर स्वामी जी पर नहीं पड़ा तब अभिचार का प्रयोग किया अन्त में तलवार लेकर मारने दौड़ा, पैर फिसल गया तलवार हाथ से गिर गया दुर्जनानन्द स्वयं तलवार के ऊपर गिरकर मर गया । दुर्जनानन्द के शिष्य प्रतिशोध की भावना से स्वामी जी के आश्रम में आये स्वामी जी

समाधिस्थ थे स्वामी जी को गंगा में फेंकने के विचार से उठाने का प्रयास किया पर सफल नहीं हुए तब उनको मारने के लिए तैयार हुए उसी समय स्वामी जी की समाधि खुल गयी उन सबको देखकर कहा बन्धुओं ! आप लोग एक साथ हमारी कुटिया में कैसे आये हैं ? हम लोग अपने गुरु जी का बदला लेने आये हैं तुम्हें मार कर गुरु के ऋण से मुक्त होंगे । स्वामी रामानन्दचार्य जी ने अपने सदुपदेश से उन सबकी बुद्धि को शुद्ध कर दिया वे सब स्वामी जी के शिष्य बन गये । स्वामी रामानन्दाचार्य जी के प्रभाव और स्वभाव को देख देखकर स्वामी राघवानन्दाचार्य बड़े प्रसन्न होते हैं ।

एक दिन एक वृद्ध ब्राह्मण ने पूजाकाल में शंख बजाया बगल में मस्जिद था मुसलमानों ने शंख ध्वनि सुनी तो बड़े क्रुद्ध हुए दौड़े हुए आये उस ब्राह्मण को पकड़ लिया और उसके घर में आग लगा दिया ब्राह्मण का एक सात साल का बच्चा उसी में सो रहा था बचाओ बचाओ कहकर ब्राह्मण रो रहा था परन्तु निर्दयी मुसलमान एक नही सुने उन मुसलमानों में एक दयालु क्षत्रिय कुलोत्पन्न सैनिक था वह दौड़ कर घर में घुसा और उस बालक को निकालकर सुरक्षित स्थान में रख दिया उसने एक ब्राह्मण के घर में रख दिया । उस ब्राह्मण ने बालक को स्वामी जी के पास पहुँचा दिया । इधर मुसलमान सैनिक वृद्ध ब्राह्मण को लेकर काजी के पास पहुँचे कुछ सैनिकों ने काजी से उस दयालु सैनिक की भी शिकायत की । काजी ने दोनों को प्राण दण्ड की आज्ञा दे दिया । वधिक लोग दोनों को बध्यस्थान में ले गये जैसे मारने के लिए तलवार उठाया वैसे ही उन्हें भयंकर शंख नाद सुनायी पड़ा सब भयभीत हो गये काजी ने कहा छोड़ दो इन्हें ये मायावी प्रतीत होते हैं उन ब्राह्मण और दयालु सैनिक के छोड़ देने पर भी शंख ध्वनि बन्द नहीं हुई सात दिन तक अविच्छिन्न रूप से सुनायी देती रही सब मुसलमान 'तोबा' 'तोबा' 'अल्ला' 'अल्ला' कहकर रो चिल्ला रहे थे किसी सज्जन मुसलमान ने सलाह दिया कि उसी ब्राह्मण और सैनिक की शरण में जाकर क्षमा याचना करो और उन दोनों को साथ लेकर पञ्च गङ्गा घाट पर स्वामी राघवानन्दाचार्य के शिष्य स्वामी रामानन्दाचार्यजी के चरण शरण में जाओ तो शान्ति मिलेगी । सब मुसलमान स्वामीजी की शरण में आकर क्षमा की याचना की । स्वामी जी ने कहा हे यवन शासकों ! तुम लोगों ने एक निरपराध ब्राह्मण का घर फूँक दिया और उसको मृत्यु दण्ड देने जा रहे थे

इसीलिए ऐसा हुआ है देखो ''जीवो और जीने दो'' का सिद्धान्त अपनाओ स्वत: मुस्लिम धर्म का पालन करो और दूसरे को भी अपने धर्म का पालन करने दो अगर शान्ति चाहते हो तो ब्राह्मण की जितनी क्षति हुई है उसे पूरा करो भविष्य में ऐसा नहीं करेंगे ऐसा वचन दो तो सब शान्त हो जायेगा काजी ने स्वामीजी की बात मान लिया आज्ञा स्वीकार करते ही शंखनाद बन्द हो गया सर्वत्र स्वामीजी की जय जयकार होने लगी । वे दोनों स्वामी जी के शिष्य हो गये ।

स्वामी श्रीराघवानन्दाचार्य जी स्वामी रामानन्दाचार्य जी के क्रियाकलाप से बहुत प्रसन्न हुए और सर्वथा अपने सम्प्रदाय के योग्य समझकर साधु सन्तों और विशिष्ट विद्वानों को बुलाकर उचित समय पर स्वामी रामानन्दाचार्य जी का जगद्गुरु पद पर अभिषेक कर दिया विशाल उत्सव मनाया गया पूरी काशी नगरी सजायी गयी सर्वत्र स्वामी जी की जय जयकार होने लगी बोलिए जगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्यजी महाराज की जय हो, स्वामी राघवानन्दाचार्य जी जगद्गुरु स्वामी रामानन्दाचार्यजी को अभिषिक्त देखकर बड़े प्रसन्न हुए, पद की गरिमा के अनुरूप दिव्य उपदेश प्रदान किया, स्वामी रामानन्दाचार्य पूज्य गुरुदेव के श्रीचरणों में नतमस्तक हो गये उनके सदुपदेशों को सहर्ष स्वीकार कर लिया ।

आचार्य पीठ पर पदासीन होने के बाद स्वामी रामानन्दाचार्य जी ने सम्पूर्ण विश्व में श्रीराम मन्त्र का प्रचार किया श्रीराममन्त्र के प्रभाव से स्वामी रामानन्दाचार्य जी की कीर्ति पताका पूरे देश में अविच्छिन्न रूप से शोभायमान हो रही है इसके पहले कुछ लोगों की ऐसी अवधारणा थी कि श्रीराममन्त्र अपने उपासकों को केवल धन सन्तानादि लौकिक स्वल्प फल ही दे सकता है इससे अधिक नहीं । श्रीराममन्त्र वैदिक नही है स्वामी जी ने इन सब भ्रान्तियों का खण्डन करते हुए श्री राम मन्त्र का वैदिकत्व समाज के समक्ष प्रकट किया ।

एक बार स्वामी जी स्वविद्यापीठ में ही विद्यार्थियों को वेदाध्ययन करा रहे थे उसी समय एक ब्रह्मवर्चस्वी कुमार आया और स्वामी जी के चरणों में प्रणत होकर बोला- भगवन् ! मैं दीन हीन ब्राह्मण बालक आपके श्रीचरणों में आश्रय चाहता हूँ मैं संन्यास लेना चाहता हूँ अतः त्राहिमाम् त्राहिमाम् । बालक की वाणी सुनकर स्वामी जी गदगद हो गये और बोले

वत्स ! तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ? किसके पुत्र हो ? बालक ने त्वरित उत्तर दिया कि श्री सरयू तट पर स्थित महेशपुर नामक ग्राम के निवासी श्री विश्वनाथ शर्मा का पुत्र 'अनन्त' नामा आपका शरणागत हूँ । मैं विरक्त होकर आपके श्रीचरणों की सेवा करना चाहता हूँ । स्वामी ने उसे बहुत समझाया कि गृहस्थाश्रम में रहकर ही भजन करो परन्तु वह अपने निश्चय पर अडिग रहा । स्वामीजी ने कहा ठीक है पहले अपने माता-पिता से आज्ञा ले आओ, वह बालक अपने पिता को लेकर स्वामी के समक्ष प्रस्तुत हुआ पिता की स्वीकृति पाकर स्वामी जी ने बालक को वैष्णवी दीक्षा प्रदान किया और नाम "अनन्तानन्द" रखा । तदनन्तर अनन्तानन्दजी ने स्वामी जी के चरणों में रहकर वेद, वेदाङ्ग व वेदान्तादि का अध्ययन किया प्रकाण्ड पण्डित होकर भगवद्भक्ति का प्रचार-प्रसार किया ।

मालवा[१] प्रान्त के 'गांगरौनगढ़' के राजा श्रीपीपाजी थे सन्तों की कृपा और अपनी इष्ट देवी की कृपा से उनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ और स्वामी रामानन्दाचार्यजी के दर्शनार्थ काशी में आये । पञ्चगंगाघाट पर स्थित श्रीमठ के समीप पहुँच कर द्वारपाल से अपने आने की सूचना स्वामी जी को देने को कहा । द्वारपाल ने स्वामी जी से निवेदन किया तो स्वामी जी ने कहा कि कह दो हम विरक्त हैं राजा महाराज से नहीं मिलते हैं । द्वारपाल के मुख से सुनकर तुरन्त राजसी चिन्हों को उतार दिया, सामान्य वेष में होकर पुन: निवेदन किया, स्वामी जी की आज्ञा पाकर श्रीचरणों में लोट गये त्राहिमाम् त्राहिमाम् । स्वामीजी ने पीपाजी को अधिकारी जानकर शुभ मुहूर्त में वैष्णवी दीक्षा प्रदान कर दिया । श्रीपीपाजी भगवान् के बहुत बड़े भक्त हुए हैं उनकी छोटी रानी सीता सहचरी और पीपाजी दोनों स्वामी जी के कृपा भाजन हुए हैं । स्वामी जी की आज्ञा पाकर पीपाजी 'गांगरौनगढ़' चले आये और सन्त सेवा करने लगे ।

इसी प्रकार श्रीस्वामीजी के तप: प्रभाव से स्वामी जी के समक्ष अनेक श्रद्धालु, दीक्षा ग्रहण करने वाले मुमुक्षु जन आते रहते थे उनमें अनेकों शिष्य श्रीराममन्त्र से दीक्षित थे, कितने तो "राम" इस मन्त्र को ही पाकर अति श्रद्धा के कारण सिद्ध महापुरुष हो गये जैसे श्री कबीर दास जी,

---

१. वर्तमान में ताड़ौत क्षेत्र में ।

रैदासजी, धन्नाजाट जी, सेन नाई आदि । बहुत से शिष्य नियमित पञ्च संस्कारों से सम्पन्न होकर सिद्ध हुए जैसे श्री अनन्तानन्दाचार्यजी, सुखानन्दाचार्यजी, सुरसुरानन्दाचार्य, नरहरियानन्दाचार्य, भावानन्दाचार्य, गालवानन्दाचार्य, योगानन्दाचार्य और श्रीपद्माजी । प्राय: ये सभी श्रीरामभक्ति के प्रचारक, पाप प्रक्षालक एवं लोक समुद्धारक हुए । इधर पीपाजी महाराज श्रद्धाभक्तिपूर्वक साधु सन्तों की सेवा कर रहे हैं और हृदय में अभिलाषा है कि कब गुरुदेव के दर्शन होंगे । माघ कृष्ण सप्तमी के दिन बड़े धूमधाम से स्वामी जी का जयन्ती महोत्सव मनाया श्री पादुकापूजन के पश्चात् आरती उतारी, प्रणाम करते समय गुरुदेव की याद में मूर्च्छित हो गये मूर्च्छावस्था में ही स्वामीजी ने दर्शन दिया और कहा चिन्ता मत करो जल्दी ही मुझे अपने नगर में देखोगे इसके लिए तुम अपने किसी व्यक्ति को मेरे पास भेजो जो सम्यक् रूप से मार्गदर्शक हो वह मुझे तुम्हारे नगर में ले जावे । मूर्च्छा दूर होने पर श्रीपीपाजी ने अपने विशेष व्यक्ति को पत्र देकर स्वामीजी के पास भेजा । श्रीपीपाजी के द्वारा प्रेषित राजभक्त पत्र लेकर स्वामीजी के चरणों में प्रस्तुत हुआ । अपने कुछ शिष्यों के साथ स्वामी जी गांगरौनगढ़ के लिए प्रस्थान कर दिये । रास्ते में स्थान-स्थान में श्री रामनाम की महिमा का गान करते लोगों के हृदय में श्रीराम भक्ति की भावना को प्रकट करते हुए चले जा रहे थे रास्ते में एक ग्राम में कुछ कोलाहल सुनायी दिया सेवकों से ज्ञात होने पर स्वामी वहाँ पहुँचे, जहाँ श्री चामुण्डा देवी के मन्दिर में शारदीय नवरात्र के उपलक्ष्य में माताजी का महामहापूजामहोत्सव चल रहा था । जहाँ सैकड़ों पण्डित विराजमान हैं कुछ लोग श्रीदुर्गा सप्तशती का पाठ कर रहे हैं कुछ शतचण्डी समाराधन में लगे हैं एक विशाल प्राङ्गण में श्रीचण्डी जी के बलिदान हेतु हजारों पशु बंधे पड़े हैं मन्दिर के पुजारी ने कहा बन्धुओं ! जिसको बलिदान करना हो वे लोग अपने-अपने पशु को बलि खम्भे के पास ले आवें, सुनकर सब अपने-अपने पशु को लेकर वध स्तम्भ के पास चले आये वधिक हाथ में शस्त्र लेकर खड़े थे पशुओं की निर्मम हत्या स्वामी जी से देखी नहीं गयी स्वामीजी सहसा बोल पड़े- भो परेतराट् ! आप लोग करुणासागरी जगन्माता के समक्ष इन्हीं के पुत्रों की बलि क्यों दे रहे हैं ? क्या अपने ही पुत्रों की बलि से मां कभी प्रसन्न हो सकती है ? स्वामीजी की वाणी सुनकर घातकों के हाथ से शस्त्र नीचे गिर गये शेष सभी स्तब्ध हो

गये लेकिन मन्दिर का पुजारी भैरव नाथ क्रोधान्ध होकर बोला आप कौन हैं रोकने वाले ? कहाँ से आये ? क्या यह कर्म वैदिक नहीं है ? शास्त्रों में यत्र-तत्र बलिदान का आदेश देखने को मिलता है फिर आप क्यों विरोध करते हैं ? स्वामीजी ने कहा राम ! राम !! मा हिंस्यात्सर्वाभूतानि वेद वाक्य है किसी भी प्राणी की हिंसा उचित नहीं है जहाँ कहीं पशुनां यजेत, वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति । छाग बलि आदि मिलता है उसका तात्पर्य बाल प्रतारणपरक है जैसे बच्चे को खेल सामग्री देते हैं उससे उसको सन्तोष होता है उसी प्रकार राक्षसी प्रवृत्ति के लोगों की सन्तुष्टि के लिए यत्किंञ्चित् हिंसा का निर्देश है इस प्रकार स्वामीजी और कौलाचार्य भैरव नाथ का बड़ा शास्त्रार्थ हुआ* अन्ततः कौलाचार्य भैरवनाथ परास्त होकर हवनकुण्ड से अग्नि निकालकर स्वामीजी के ऊपर फेंकना शुरू कर दिया लेकिन प्रयास व्यर्थ हो गया फिर अभिचार प्रयोग किया फलतः स्वयं मर गया इस प्रकार पशुओं की रक्षा करते हुए अहिंसा का प्रचार करते हुए स्वामी जी धीरे-धीरे गांगरौन गढ़ पहुँच गये । पीपाजी ने बड़ी धूमधाम से स्वामी जी का स्वागत समारोह किया । दूसरे दिन स्वामी जी ने मानव मात्र के कल्याण के लिए भक्ति को सर्वश्रेष्ठ बताया और[1] भक्ति का ही विशिष्ट रूप प्रपत्ति है[2] और प्रपत्ति के निरूपण के पश्चात् भक्तों की जिज्ञासा के अनुरूप स्वामी जी ने अर्थपञ्चक[3] का स्वरूप विस्तार से बताया । इस प्रकार तत्रत्य भक्तों एवं सन्तों को स्वप्रवचनामृतपान कराते हुए स्वामी जी एक महिना पन्द्रह दिन तक गांगरौन गढ़ में रह गये । स्वामी जी ने श्रीपीपाजी से कहा कि अब हम सब तो श्रीद्वारका धाम जायेंगे आप यहीं रहकर सन्तों की खूब सेवा करें सन्तों की बड़ी महिमा है स्वयं ठाकुर जी भी वैष्णवों की महिमा का मुक्त कण्ठ से गान करते हैं । अतः आप सन्तों की सेवा करें पीपाजी स्वामी जी के चरणों में गिर पड़े, आप मुझे अपने चरणों से अलग न करें मुझे भी साधु वेष प्रदान कर अपने साथ ले चलें स्वामी जी ने कहा ठीक है अपनी पत्नियों से

---

* विशेष जानकारी के लिए परिच्छेद ३० देखें ।

[1]. विशेष जानकारी के लिए परिच्छेद ३१ देखें ।

[2]. विशेष जानकारी के लिए परिच्छेद ३२ देखें ।

[3]. विशेष जानकारी के लिए परिच्छेद ३३ देखें ।

अनुमति ले आओ । गुरुदेव की आज्ञा पाकर पीपाजी बड़े प्रसन्न हुए अपने रनिवास में गये अपनी रानियों को बहुत समझाया लेकिन सबसे छोटी रानी श्रीसीता सहचरी जी तत्काल साध्वी वेष बनाकर श्रीपीपाजी के चरणों में गिर पड़ी कि आप मेरा त्याग न करें, मुझे अपने साथ रखें । दूसरे दिन श्रीपीपाजी ने अपने पुत्र को राज सिंहासन पर बैठाकर उसका सविधि राज्याभिषेक कर दिया और स्वामी जी की आज्ञा से सीता सहचरी जी को साथ लेकर स्वामी जी के साथ द्वारकापुरी की ओर प्रस्थान कर दिये । श्रीपीपाजी के पुत्र ने जहाँ स्वामी जी ठहरे थे वहाँ एक भव्य मन्दिर बनवाकर स्वामी जी की चरणपादुका पधरा दिया ।

श्रीस्वामी जी महाराज गांगरौन गढ़ से क्रमशः चलते हुए विभिन्न तीर्थों, नदियों, सरोवरों का दर्शन करते हुए अपने प्रवचन सुधा से सबको आप्लावित करते हुए ''गिरिनार'' पहुँचे वहाँ के राजा ने स्वामी जी का भव्य स्वागत किया गिरिनार पर्वत पर चढ़ने के लिए राजा के द्वारा विविध वाहनों की व्यवस्था होने पर भी स्वामी जी पैदल ही पर्वत पर चढ़ गये । गिरिनार की तलहटी की शोभा ही निराली थी स्वामी जी वहाँ कुछ समय निवास किये उसके बाद वहाँ से प्रभास क्षेत्र के लिए प्रस्थान किया । उस समय के वैष्णवों ने जहाँ स्वामी जी ठहरे थे वहाँ स्वामी जी की चरण पादुका पधरा दिया आज भी वह स्थान 'चरणपादुका' के नाम से प्रसिद्ध है ।

वहाँ से स्वामी जी ने प्रभास क्षेत्र के लिए प्रस्थान किया मार्ग में एक सिद्ध औघड़ मिला वह अपना चमत्कार दिखाने लगा कुत्ता, मेष, वराह, सिंह आदि विभिन्न रूप क्षण क्षण में बदलने लगा । कभी आंधी बनकर कभी धूल के साथ भयंकर तूफान बनकर प्रकट हो गया । कभी अग्नि बनकर वन के वृक्षों को जलाने लगा अग्नि के रूप में चारों ओर फैलने लगा साधु सन्तों की ओर बढ़ने लगा । स्वामी जी ने भगवन्नाम महानारायणास्त्र का प्रयोग करके उसकी सारी माया को ध्वस्त कर दिया । थोड़ी देर में वह औघड़ स्वामी जी के चरणों में आकर त्राहि त्राहि करने लगा स्वामी जी ने कहा कोई बात नहीं, क्षमा कर दिया लेकिन वह दुष्ट सभी सन्तों के प्राणवायु का अवरोध कर दिया स्वामी जी ने अपने कमण्डलु के जल को अभिमन्त्रित करके छिंटा दिया सब पुनः स्वस्थ हो गये लेकिन वह औघड़ अपने ही कर्म से जलने लगा । त्राहि त्राहि करके स्वामीजी के चरणों में लोटने लगा, स्वामी

जी ने फिर क्षमा कर दिया अब वह स्वामी जी का शिष्य हो गया तान्त्रिक वेष कृत्यादि छोड़कर सदा के लिए वैष्णव हो गया । इस प्रकार मार्ग में नाना प्रकार के कौतुक और श्रीराम मन्त्र की महिमा को प्रकट करते हुए स्वामी जी प्रभास क्षेत्र पहुँचे । द्वापर युग में यदुवंशियों का संहार यहीं हुआ था । उस दृश्य को याद करके सबके सब रो पड़े ।

स्वामी जी ने कहा सन्तों से परिहास करने के कारण और मदिरापान करने के कारण ही भगवान् से सम्बद्ध यदुवंशी भी आपस में लड़ मरे इसीलिए सन्तों का परिहास कभी नहीं करना चाहिए और न ही भूलकर भी मदिरापान करना चाहिए । वहाँ से चलकर स्वामीजी ने सोमनाथ मन्दिर का दर्शन किया । टूटे हुए शिखर को देखकर सजल नयन हो गये जब क्षेत्रीय जन समुदाय इकट्ठे हो गये तब स्वामी जी ने कहा सनातन धर्मावलम्बि हिन्दुओं ! आज तक महामोहाज्ञानरूपी निद्रा आप लोगों की टूटी नहीं, आप लोगों के कायरता की भी हद हो गयी आप लोगों के जीते ही भगवान् सोमनाथ की मूर्ति खण्डित हो गयी । अब आप लोग पुन: प्रकृतिस्थ हो जाइए, अपने को पहचानिये आपसी भेद भाव को मिटाकर अधर्म की सत्ता का विध्वंसन करने के लिए पुन: उत्साह दिखाइए अपना पौरुष दिखाइए सनातन धर्म की ध्वजा को पुन फहराइए ।

श्रीसोमनाथ जी का दर्शन करने के पश्चात् स्वामीजी वहाँ से श्रीद्वारकापुरी आये । श्रीद्वारकापुरी में स्थित सरोवरों और श्रीगोमती नदी में स्नानादि करके श्रीद्वारकाधीश भगवान् का दर्शन करके स्वामी जी बड़े प्रसन्न हुए । दूसरे दिन द्वारकावासियों ने एक विशाल सभा का आयोजन किया श्री द्वारकापुरी की सभा में उपस्थित होकर स्वामी जी ने श्री द्वारकापुरी और तीर्थों की महिमा का बड़ा सुन्दर वर्णन किया ।

श्री द्वारकापुरी से स्वामीजी ने महर्षि कर्दमजी के आश्रम की ओर प्रस्थान किया, रास्ते में श्री डाकौर में श्री रणछोड़ राय जी के मन्दिर में पहुँचकर श्रीरणछोड़ भगवान् का दर्शन यथानियम पूजनादि किया वहीं रात्रि में विश्राम किया । दूसरे दिन दानवीर कर्ण की नगरी कर्णावती-अहमदाबाद जो श्रीसाबरमती नदी के दक्षिणतट पर स्थित है वहाँ गये । यहीं श्री साबरमती नदी के उत्तर तट पर परम तपस्वी भगवान् मरीचि महर्षि का आश्रम है वहाँ पहुँचकर स्वामी जी ने उस दिन वहीं विश्राम किया । स्वामी

जी ने महर्षि मरीचि के आश्रम की महिमा का वर्णन किया जब श्रीदधीचि के अस्थि से निर्मित वज्र से इन्द्र ने वृत्तासुर का वध कर दिया तो ब्रह्म हत्या इन्द्र के पीछे पड़ गयी जब इन्द्र को कहीं शरण नहीं मिली तो मरीचि महर्षि के आश्रमस्थ सरोवर में एक विशाल कमल की नाल में बैठकर भगवन्नाम जप किया तब ब्रह्म हत्या से मुक्त हुए । इसलिए यह स्थान परम पवित्र है यहाँ एक रात्रि विश्राम अवश्य होना चाहिए

दूसरे दिन स्वामी जी वहाँ से सिद्धपुर के लिए प्रस्थान करते हैं वहाँ से चलकर स्वामी जी "बिन्दु सरोवर' आये जहाँ सांख्याचार्य भगवान् कपिल का प्राकट्य हुआ था जहाँ श्रीसरस्वती नदी प्रवाहित हो रही है महर्षि कर्दम की तपस्या से जब ठाकुर जी प्रसन्न हुए तब उनके नेत्रों से प्रेमाश्रु छलक पड़े थे उसी से एक सरोवर बन गया उसी का नाम "बिन्दु सरोवर" है स्वामी जी ने श्रीसरस्वती नदी में स्नान करके बिन्दु सरोवर के पास आकर अपना दैनिक कृत्य सम्पन्न किया । श्रोताओं के विशेष आग्रह पर स्वामी जी ने बिन्दु सरोवर की महिमा का गान किया[१] और भविष्य में सींगडा (विस्राय द्वारिका) कौशलेन्द्रमठ अहमदाबाद एवं सिद्धपुर के मन्दिरों स्वसम्प्रदाय द्वारा उद्धार की भविष्य वाणी की । वहाँ से स्वामी जी "आबू" के लिए प्रस्थान किये । रास्ते में एक जैन भिक्षुक मिल गया उसने जब स्वामी जी के वैभव तेज आदि देखा तो स्वामी जी से प्रश्नोत्तर करने लगा सनातन धर्म के विषय में । जैन साधु बोला स्वामी जी ! आप जैसे विद्वान लोग भी वेद को प्रमाण मानते हैं आप नहीं जानते हैं कि वेदों की रचना भण्ड, धूर्त और निशाचरों ने की है वेद का कोई प्रामाण्य नहीं है वेद को प्रमाण मानने वाले स्वतः भ्रान्त है और दूसरों को भ्रम में डाल रहे हैं ये काषायवस्त्र क्यों धारण कर रहे हैं ? सब छोड़कर अरिहन्त की उपासना कीजिए उसी में सबका कल्याण है ।

उस जैन भिक्षुक की बात सुनकर सब सन्त, महान्त बड़े क्रुद्ध हुए । उसको धिक्कारने लगे स्वामी जी ने सबको शान्त किया और जैन साधु से कहा भगवन् ! जो कुछ भी आपने कहा है वह अज्ञानमूलक एवं अशोभनीय एवं अस्वाभाविक है जैसे "उल्लू" को सूर्य के किरणों के गुणगण का परिज्ञान नही होता है क्योंकि वह सूर्य को नहीं देखता है वह

---

[१]. विशेष ज्ञानार्थ ३९ परिच्छेद देखें ।

तो तम: प्रधान रात्रि का प्रेमी है उसी प्रकार आपकी मति कुण्ठित है और तत्व चिन्तन शक्ति भी कुण्ठित है इसलिए आप सनातन धर्म के रहस्य को नहीं जानते हैं । सुनकर जैन साधु ने कहा भगवन् "श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ" इस मन्त्र में भगवान् की दो पत्नियों का वर्णन है अब आप ही बताइए जो स्त्री के पराधीन है वह कैसे सृष्टि की रचनाकर सकता है क्योंकि स्त्री तो माया है वह तो पुरुष के सारे ज्ञान विज्ञान को हर लेती है ऐसे में वह स्त्रैण भगवान् विश्व का नियन्त्रण कैसे करेगा ? वह सृष्टि का कर्ता कैसे होगा ? जैन साधु की बात सुनकर स्वामी जी मुस्कराये और बोले भगवन् ! आपके मन: स्थित परमात्मा हमारे यहाँ स्वीकृत नहीं है । हमारे प्रभु तो कभी भी माया के दास नहीं हो सकते । माया उनकी दासी है माया नर्तकी की भांति भगवान् के इशारे पर चलती है माया उनकी शक्ति है सर्वशक्तिमान एकमात्र परमात्मा है अन्य कोई नहीं । जैन सिद्धान्त की यह मान्यता कि जीव उच्चकर्म करके ईश्वर बन सकता है यह सर्वथा गलत है क्योंकि ईश्वर एक है सर्वशक्तिमान् अन्तर्यामी और सर्वत्र है जीव तो अल्पज्ञ है अल्पशक्तिमान् है अत: कभी भी जीव ईश्वर नहीं हो सकता । इस प्रकार जैन साधु को समझा बुझाकर स्वामी जी आबू पहाड़ पहुँच गये । गिरि गुफाओं में तप करते हुए अनेक महर्षियों के दर्शन हुए । श्री वशिष्ठाश्रम से थोड़ी दूर "नक्खी सरोवर" पर स्वामी जी ने ठहरने का विचार बनाया । उस समय वहाँ श्री मिलिन्द सूनु नाम के सिद्ध सन्त निवास करते थे जो श्री सीताराम जी के अनन्य सेवक श्री सौकल्य महर्षि के शिष्य थे जिनके भक्ति भाव से प्रसन्न होकर भगवान् श्रीराम प्रकट होकर उनको दर्शन दिये श्रीठाकुरजी का वही विग्रह आज भी उनकी कुटिया में विराजमान है स्वामी जी ने सौकल्य महर्षि की कुटिया में आकर श्रीरघुनाथ जी का दर्शन किया स्वामी ने आदेश दिया कि इस कुटिया की जगह श्रीरघुनाथ जी का विशालकाय मन्दिर बनना चाहिए आदेश होते ही कार्य का श्रीगणेश हो गया आबू में आज भी वह "श्रीरघुनाथ मन्दिर" नाम से प्रसिद्ध है वहाँ नित्य श्रीठाकुरजी के सेवा पूजा एवं साधु सन्तों की सेवा चलती रहती है ।

एक बार सत्सङ्ग में श्रीस्वामी जी के सुयोग्य शिष्य श्रीसुरसुरानन्दजी ने स्वामी जी से दश[१] प्रश्न पूछे तत्त्व क्या ? जाप्य क्या है ? ध्येय क्या है? मुक्ति का साधन क्या है ? सर्वश्रेष्ठ धर्म क्या है ? वैष्णव कितने प्रकार के होते हैं ? वैष्णवों के लक्षण क्या है ? वैष्णवों को कहाँ निवास करना चाहिए ? काल क्षेप कैसे करना चाहिए मोक्ष के लिए कैसे साधन का अनुष्ठान करना चाहिए ? श्री सुरसुरानन्दजी के प्रश्नों को सुनकर स्वामी जी बड़े प्रसन्न हुए और विस्तारपूर्वक सभी प्रश्नों का उत्तर दिया ।

नक्खी तट से उठकर स्वामी जी ने गिरिशिखरों को देखते हुए आबू पर्वतों से श्रीपुष्कर क्षेत्र की ओर प्रस्थान किया । मार्ग में क्रमशः एक गिरिशिखर से दूसरे गिरिशिखर को पार करते हुए अनेक वनों उपवनों को पार करते हुए स्वामी जी त्रिपुष्कर, त्रिकुण्डमय (पुष्कर, ज्येष्ठ पुष्कर, वृद्ध पुष्कर) परम पावन पुष्कर क्षेत्र पहुँचे । सकल तीर्थ राज मौलिमण्डन स्वरूप त्रिपुष्कर क्षेत्र में प्रवेश करके स्वामीजी ने ज्येष्ठ पुष्कर में स्नान ध्यानादि क्रिया सम्पन्न किया । सत्सङ्ग के सुअवसर पर स्वामी जी ने पुष्कर तीर्थराज की महिमा का वर्णन किया ।

तीन रात्रि तक विश्राम करने के पश्चात् स्वामी जी वहाँ से 'आम्बेर' राजधानी के लिए प्रस्थान करते हैं आम्बेर नरेश ने स्वामी जी का खूब स्वागत किया । सारी प्रजा और सपत्नीक राजा के भी स्वामी जी के प्रवचनामृत श्रवण के उत्सुक होने पर स्वामी जी ने अपना उपदेश प्रदान किया । वर्तमान भारतीयों की स्थिति पर खेद व्यक्त करते हुए सबको सावधान किया । धर्म का स्वरूप समझाया । धर्म का पालन न करने पर स्वेच्छाचारी होने पर सृष्टि में क्या विप्लव होगा इसका वर्णन किया । वर्ण संकर से पितरों को पिण्ड क्यों नहीं प्राप्त होता[२] है इसका भी सुन्दर वर्णन किया । "आम्बेर" राजधानी से स्वामी जी चित्तौड़ के लिए प्रस्थान करते हैं चित्तौड़ में भी स्वामी जी का खूब स्वागत हुआ स्वामी जी ने वहाँ के वीर क्षत्रिय कुमारों को अपनी मातृ भूमि की रक्षा के लिए सतत सावधान रहने का अनुरोध किया ।

---

[१]. विशेष जानकारी के लिए परिच्छेद ४० एवं श्रीवैष्णवमताब्ज भास्कर देखें ।

[२]. विषय जानकारी के लिए परिच्छेद ४१ देखें ।

चित्तौड़ से स्वामी जी उज्जैन आये, उज्जैन में क्षिप्रा नदी में स्नान ध्यानादि नित्यकर्म सम्पन्न किया और भगवान् महाकालेश्वर का अर्चन वन्दन किया । अपने प्रवचन के माध्यम से स्वामी जी ने अवन्तिकापुरी की महिमा का मुक्त कण्ठ से गान किया । श्रद्धा के बिना कोई भी कर्म फलदायी नहीं होता है श्रद्धा परमावश्यक है श्रद्धा की महिमा भी स्वामी जी ने बताया । अनन्यता का स्वरूप भी स्वामी जी ने स्पष्ट व्यक्त किया ।

उज्जैन से नागदा कोटा होते हुए स्वामी जी व्रज भूमि में प्रवेश करते हैं जहाँ नित्यानन्दमयी रासलीला करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण आज भी विहार कर रहे हैं वहाँ श्री मधुपुरी और श्रीयमुनाजी का दर्शन करके स्वामी जी बड़े प्रसन्न हुए, स्वामी जी के नेत्रों से प्रेमाश्रु छलक पड़े । क्रमशः स्वामीजी ने श्रीगोकुल, श्रीवृन्दावन, श्रीमधुवन, श्रीगोवर्धन, श्रीकाम्यवन, श्रीनन्द गाँव और श्रीबरसाना धाम आदि दिव्य धामों का दर्शन किया और गदगद हो गये । एक बार श्रीयमुना के तट पर एकान्त में निवास करने वाले श्रीकृष्णविरही जी महाराज परमहंसजी ने स्वामी जी को अपनी कुटिया पर स्वागत के लिए आमन्त्रित किया, आमन्त्रण स्वीकार के स्वामी जी परमहंस जी की कुटिया पर पहुँचे दोनों का अद्भुत मिलन हुआ उस दिन एकादशी थी फलाहार पाने के लिए दोनों महापुरुष बैठे ही थे कि उसी समय नाम और महिमा सुन सुनकर अनेक सन्त, महान्त और व्रजवासी चले आये स्वामीजी ने सबको पंक्ति में बैठाकर स्वल्प फलाहार में ही तृप्त कर दिया । सब लोग स्वामीजी का प्रभाव देखकर बड़े प्रसन्न हुए । इस प्रकार स्वामीजी "व्रजचौरासी कोश" में कई दिन बिताये उसके बाद वहाँ से चित्रकूट के लिए प्रस्थान किया मार्ग में बुन्देलखण्ड के नरेश ने स्वामी जी का भव्य स्वागत किया वहाँ से स्वामी जी श्रीचित्रकूट धाम पहुँचे । स्वामी जी ने श्रीचित्रकूट में ही "चातुर्मास्य महाव्रत" करने का नियम लिया प्रतिदिन नित्य नियम सम्पन्न करने के बाद श्रीकामदगिरि की परिक्रमा होती नित्य सत्सङ्ग प्रवचन होता था एक दिन किसी के जिज्ञासा करने पर स्वामी जी ने ईश्वर के जगत्कर्तृत्व,[१] अवतार आदि के विषय में बड़ी सुन्दर चर्चा की ।

---

[१]. विषय जानकारी के लिए परिच्छेद ४५ देखें ।

एक दिन स्वामीरामानन्दाचार्य जी महाराज सन्तों के साथ श्री कामदगिरि की परिक्रमा करने गये । परिक्रमा करते समय श्रीराम और भरतजी के मिलाप स्थल को देखकर सब के सब सजल नयन हो गये स्वामी जी ने श्रीरामवनगमन एवं उभय मिलन (श्रीराम भरत मिलन) का बड़ा सरस प्रवचन किया सभी लोग सुनकर मुग्ध हो गये ।

श्री चित्रकूट चार्तुमास्यव्रतसम्पन्न करके स्वामी जी ने वहाँ से तीर्थराज प्रयाग के लिए प्रस्थान किया त्रिवेणीसंगम में स्नानादि के पश्चात् स्वामीजी अपने माता पिता से मिले । स्वामी जी ने माता पिता की महिमा का मुक्तकंठ से गान किया । स्वामीजी का दर्शन एवम् उपदेश श्रवण करके श्री पुण्यसदन और श्री सुशीला जी ने अपने शरीर का उत्सर्ग कर दिया, स्वामी जी ने अपने कर कमलों से उनका अन्तिम संस्कार किया । माता-पिता के समस्त उत्तरकर्म सम्पन्न होने के पश्चात् स्वामीजी तीर्थराजप्रयाग को प्रणाम करके अयोध्याजी के दर्शनार्थ प्रस्थान किये, अयोध्याजी में श्रीजानकीघाट में श्रीस्वामीजी ठहरे । वहाँ कई दिनों तक ठहरकर स्वामीजी ने भावुक भक्तों के समक्ष श्री वैष्णव भक्तों के पावनकर्तव्यों का निरूपण किया । वहाँ से प्रस्थान करके स्वामीजी काशी में पञ्चगंगा घाट पर स्थित श्री मठ में आये । स्वगुरुदेवपूज्यचरण श्रीराघवानन्दाचार्यजी के पावनपादपद्मों में वन्दन किया । स्वामीराघवानन्दाचार्यजी स्वामीरामान्दाचार्यजी का यशोगान सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने आचार्यासनपर स्वामीरामानन्दाचार्यजी को बैठाकर तिलक व चादरविधिपूर्वक श्रीमठ का अधीश्वर बना दिया कुछ समय पश्चात् भगवद्धाम चले गये । स्वामी राघवानन्दाचार्यजी के भगवद्धाम गमन के पश्चात् अपने गुरूदेव की प्रसन्नता के लिए स्वामी रामानन्दाचार्यजी ने निखिल सम्प्रदाय के सन्तों महान्तों एवं विद्वानों ब्राह्मणों का सम्मेलन कराया उसमें सभी का भोजन अन्न, वस्त्र एवं दक्षिणा से स्वागत किया और "**शम्भुभेष**" नामक विशाल भण्डारे का आयोजन किया ।

कुछ समय पश्चाद् एकतान्त्रिक ने श्रीमठ के समीप आकर अपनी माया का प्रयोग किया, स्वामी जी ने उसकी माया को नष्ट करके एक लघु अभिचार का प्रयोग किया जिससे उसके पेट में दर्द होने लगा वह स्वामीजी

के चरणों में आकर त्राहि-त्राहि करके गिर पड़ा और स्वामीजी का शिष्य बन गया। एक बार एक दिग्विजयीपण्डित "महासेन" श्रीमठ में शास्त्रार्थ करने के लिए आया और स्वामीजी को ललकारने लगा। श्रीपीपाजी से नहीं देखागया उन्होनें कहा कि चलो पहले मेरे से शास्त्रार्थ करो पूछो क्या पूछते हो? क्या शंका है? पीपाजी की वाणी सुनकर वह कुछ बोल नहीं सका उसकी वाणी कीलित हो गयी श्रीपीपाजी के चरणों में गिर पड़ा कहा कि आप हमें स्वामीजी का दर्शन कराइए पीपाजी उसे स्वामीजी के समीप ले गये स्वामी जी के दिव्य-उपदेश से वह तृप्त हो गया स्वामीजी की आज्ञापाकर वह अपने घर चलागया और वैष्णव धर्म का प्रचार करने लगा। कुछ समय पश्चाद् मद्रास का एक "अपार" नाम का पण्डित अपनी पुत्री विद्या के साथ स्वामीजी के पास शास्त्रार्थ के लिए आये और अन्त में स्वामीजी के शिष्य हो गये।

एक बार 'सत्यमूर्ति' नाम के मद्रास के पण्डित स्वामी जी से शास्त्रार्थ के लिए आये "जीव अणु है आहो स्वित् विभु" विषय पर शास्त्रार्थ हुआ स्वामीजी ने जीव के अणुत्व* का प्रतिपादन किया। स्वामीजी के सुविचारों से 'सत्यमूर्ति' पण्डित बड़े प्रसन्न हुए और श्रीराममन्त्र से दीक्षित होकर स्वामीजी के शिष्य हो गये।

एक बार स्वामीजी श्रीमठ में विद्यमान थे दिल्ली के बादशाह बहलोल लोदी के कुछ सेवक आकर स्वामीजी के चरणों में राजकीय मणिरत्नादि भेंट करके बोले स्वामी जी! हमारे बादशाह के शिर में भयंकर वेदना हो रही है आप दिल्ली चलकर उनके शिरोवेदना को ठीक कर दें श्रीस्वामीजी ने वहीं से बादशाह की पीड़ा दूर कर दिया और राजकीय भेंट सामग्री को वापस कर दिया- बादशाह इस घटना से बड़ा प्रभावित हुआ और अपने गुरु "तकी" को स्वामीजी के पास भेजा। तकी ने ईश्वर के शरीर के विषय* में बहुत प्रश्न किया स्वामीजी ने ईश्वर शरीर का प्रतिपादन करते हुए भगवान् के पाषाणमय विग्रह के पूजन पर भी बल दिया। स्वामी ने उसको समझा बुझाकर दिया भेज दिया।

---

* विशेष जानकारी के लिए परिच्छेद ४८ देखें।

* विशेष जानकारी के लिए परिच्छेद ४९ देखें।

लोगों के विशेष आग्रह पर अपने शिष्यों के साथ स्वामीजी ने **"गंगासागरसङ्गम"** की यात्रा की । मकरसंक्रान्ति के विशेष अवसर पर गङ्गासागर सङ्गम में स्नानादि कृत्य करने के पश्चात् स्वामी जी ने वहाँ से जगदीश पुरी के लिए प्रस्थान किया । वहाँ श्री जगन्नाथ भगवान् का दिव्य दर्शन किया । पुरी के राजासाहब से सत्कृत स्वामीजी ने एक जन्मान्ध ब्राह्मण को नेत्रप्रदान किया । लोगों के विशेष आग्रहपर 'परलोक'[१] के विषय में स्वामीजी ने प्रवचन किया । तदनन्तर स्वामीजी ने 'वर्णाश्रम'[२] के विषय में सुव्यवस्थित विचार प्रस्तुत किया लोगों की प्रार्थना पर स्वामी जी ने समुद्र में एक मानरेखा खींच दिया और समुद्र से प्रार्थना किया कि आप इस रेखा के आगे ने आयें ताकि पुरी के लोग सकुशल रह सकें । "जलप्रपूरिणी" विद्या से स्वामीजी ने चन्दनसरोवर को सदासर्वदा के लिए जल से परिपूर्ण कर दिया इसके पहले गर्मी में उसका जल सूखजाता था ।

इस प्रकार उत्कलदेश की यात्रा करते हुए स्वामीजी "श्रीरामेश्वरम्" पहुँचे । वहाँ उस समय शैवों और वैष्णवों में बड़ा संघर्ष चल रहा था स्वामीजी ने **"शिवस्वरूप"**[३] का सुन्दर निरूपणकर के आपसीमतभेद को दूर कर दिया । विजयनगर, शिवकाञ्ची आदि की यात्रा करते हुए स्वामीजी विष्णुकाञ्ची पहुँचे । मन्दिर के पूजारियों ने ईर्ष्याबश भगवान् का दर्शन स्वामीजी न कर सकें इसके लिए बहुत प्रयास किया लेकिन भगवान् स्वतः स्वामीजी को दर्शन देना चाहते थे अतः वे सफल नहीं हो सके । तब पूजारियों ने स्वामीजी के चरणों में जाकर क्षमायाचना किया और आदर पूर्वक स्वामीजी को मन्दिर में ले आये । स्वामीजी ने भगवान् विष्णु का अर्चन वन्दन किया और लोगों को वैष्णवधर्म का वास्तव स्वरूप बताया । वहाँ से "श्रीरङ्गम्" की यात्रा की । वहाँ के वैष्णवों ने स्वामीजी के साथ में 'कबीर रैदास' आदि को देखकर श्रीरङ्गनाथ भगवान के दर्शन का विरोध किया । स्वामीजी ने श्रीरङ्गनाथ भगवान् से प्रार्थना किया तब पूजारियों ने **"श्रीरङ्गनाथ भगवान्"** के आसन पर द्वादश शिष्यों के साथ श्रीस्वामीजी का

---

[१]. टिप्पणी - इस विषय में विशेष देखिए परिच्छेद ५० देखें ।
[२]. टिप्पणी - इस विषय में विशेष देखिए परिच्छेद ५१ देखें ।
[३]. टिप्पणी - इस विषय में विशेष देखिए परिच्छेद ५२ देखें ।

दर्शन किया यह दृश्य देखकर सारे पुजारी स्वामीजी के चरणों में आकर गिर पडें और ले जाकर मन्दिर में भगवान् का दर्शन कराया । वहाँ से स्वामीजी ने मैसूर के लिए प्रस्थान किया । मार्ग में जनसमुदाय के विशेष आग्रह पर शाश्वत सुख की प्राप्ति का उपाय एवं मन्दिर[१] में किसका प्रवेश उचित है आदि विषयों पर विशेष प्रवचन दिया । दूसरे दिन स्वामी जी मैसूर पहुँचे । वहाँ के नागरिको ने स्वामीजी का भव्य स्वागत किया ।

उस समय वहाँ मायावादियों का प्रचण्ड प्रभाव था । एक मायावादी ने स्वामीजी से प्रपत्ति के विषय में एवं जीव अज्ञान कल्पित है वास्तव में एक ही तत्व आत्मा है आदि विषयों पर प्रश्न किया स्वामीजी ने विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त के अनुसार जीव वास्तव तत्व है और प्रपत्ति भगवदुपलब्धि में प्रधान कारण है आदि निरूपण किया । सुनकर वह वैष्णवी दीक्षा लेकर ''श्रीसुरेश्वराचार्य'' नाम से प्रसिद्ध धर्मोपदेष्टा हुए । इस प्रकार दक्षिण की यात्रा सम्पन्न करके स्वामीजी वहाँ से महाराष्ट्र के लिए 'श्रीरामटेक' 'पण्ढरपुर' आदि स्थानों की यात्रा करते हुए 'नासिक' के मार्ग में एक जैन साधु से मिले उसने स्वामीजी से 'ईश्वर सृष्टिकर्ता' है इस विषय में पूछा, स्वामीजी ने ईश्वर सृष्टिकर्तृत्व का सम्यक् प्रतिपादन किया एवं यज्ञीय हिंसा के स्वरूप का स्पष्टीकरण किया स्नान का प्रयोजन भी बताया । स्वामी जी काश्मीर पहुँचे । वहाँ लोगों के विशेष-आग्रह पर ''मूर्तिपूजा''[२] के विषय में अपना विचार प्रकट किया । श्राद्ध[३] के विषय में स्वामी जी ने श्रुति स्मृति प्रमाण पूर्वक श्राद्ध का पूर्ण समर्थन किया । वहाँ से अमरनाथ की यात्रा की । अष्टमूर्ति भगवान् अमरनाथ की पूजार्चना के पश्चात् स्वामी जी सिन्धु देश की यात्रा करते हैं वहाँ के आचार-विचार को देखकर स्वामी जी ने ''आहार शुद्धि'' पर विशेष उपदेश दिया । वहाँ से स्वामी जी मिथिला की यात्रा करते हैं नयपाल नरेश ने स्वामी जी का भव्य स्वागत किया स्वामी जी ने सम्पूर्ण मिथिला-नयपाल एवं पशुपतिनाथ, मुक्तिनाथ, दामोदर कुण्डादि की यात्रा सम्पन्न करके काशी के लिए प्रस्थान किया ।

---

१. टिप्पणी - इस विषय में विशेष देखिए परिच्छेद ५४ देखें ।

२. टिप्पणी- मूर्तिपूजा पर विशेष देखिए परिच्छेद ५६ देखें ।

३. टिप्पणी- श्राद्ध पर विशेष देखिए परिच्छेद ५६ देखें ।

एक बार स्वामी जी काशी में अपने शिष्यों के साथ विचार-विमर्श कर रहे थे उसी समय कुछ सन्त महान्त स्वामी जी के पास आये और अयोध्यावासियों पर हुए यवनों के आतंक की चर्चा की । अयोध्यावासियों की दयनीय दशा को सुनकर स्वामी जी बड़े दुःखी हुए और सन्तों के साथ श्री सुरसुरानन्द जी को भेजा श्री सुरसुरानन्दाचार्य जी ने यत्र तत्र वैष्णव यन्त्र की स्थापना कर दी, उसके प्रभाव से सभी हिन्दू बड़े प्रसन्न हुए और मुस्लिम लोग त्राहि त्राहि करने लगे । मुसलमानों की दुर्दशा को जब बहलोल लोदी ने सुना तो उसने अपने धर्मगुरु को स्वामी जी के चरणों में भेजा । काजी स्वामी जी के चरणों में प्रस्तुत होकर बादशाह के निवेदन को सुनाया । श्रीकबीरदास जी ने काजी को खूब समझाया और हिन्दूओं पर हो रहे आतंक को स्पष्ट किया और कहा यदि शान्ति चाहते हैं तो १२ शर्तों को स्वीकार करो काजी ने तुरन्त स्वीकृति पत्र लिखकर मोहर लगाकर दे दिया उसके बाद शिष्यों के साथ स्वामी जी स्वयं अयोध्या आये । श्रीसुरसुरानन्दजी को 'श्रीवैष्णवयन्त्र' को शान्त करने का आदेश दिया जो हिन्दू हठात् मुसलमान बन गये थे उनको स्वमीजी ने प्रायश्चित कराकर हिन्दू बना दिया ।

इस प्रकार पृथिवी पर सर्वत्र श्रीराम भक्ति का प्रचार प्रसार करते हुए एक सौ सत्तर साल व्यतीत हो गये स्वामी जी ने सभी दिशाओं में सभी तीर्थ क्षेत्रों में श्री वैष्णव मठों की स्थापना किया और अपने सुयोग्य शिष्यों को मठाधीश्वर बनाकर प्रत्येक मठ को सुव्यवस्थित किया । स्वामी जी प्राकट्य विक्रम संवत १३५६ में हुआ और अपने शिष्यों को सदुपदेश देकर विक्रम संवत १५२६ में भगवत्सायुज्य को प्राप्त हो गये ।

"ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः शुभं भवतु"